78. M/PCD/62 M of L J & CA.
Govt. of India
P(D) 8.1.1980
Pages = 41

भरत क विधि अयोग

इकहत्तरवीं रिपोर्ट

Regd No. RL 294

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955

विधि, न्याय और कम्पनी कार्य मंत्रालय
10 JAN 1980
356914

अपरिहयं विच्छिन्न विव ह

विवाह विच्छेद का एक अाधार

अप्रैल, 1978

अध्यक्ष
विधि आयोग
भारत सरकार
7 अप्रैल, 1978

प्रिय मंत्री जी,

मैं इसके साथ भारत के विधि आयोग की इकहत्तरवीं रिपोर्ट भेज रहा हूं जो हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 में ऐसे संशोधन के बारे में है जिससे अपरिहार्य) विच्छिन्न-विवाह को विवाह-विच्छेद का एक आधार बनाना चाहा गया है।

रिपोर्ट के प्रथम अध्याय में वे परिस्थितियां बताई गई हैं जिनमें यह मामला विधि आयोग द्वारा विचारार्थ लिया गया। मामले को लेने के पश्चात् आयोग ने एक प्रश्नसूची जारी की जिसमें विचारार्थ पैदा होने वाली बातों पर संबंधित पक्षों और निकायों के विचार आमंत्रित किए गए।

प्रश्नों के उत्तर प्राप्त होने पर एक प्रारूप-रिपोर्ट तैयार की गई और अंतिम रूप देने से पूर्व उस पर विस्तारपूर्वक विचार किया गया।

रिपोर्ट तैयार करने में मुझे आयोग के सदस्य-सचिव श्री पी० एन० बख्शी से जो बहुमूल्य सहायता मिली उसकी मैं लिखित रूप में सराहना करता हूं।

सादर।

भवदीय

(एच० आर० खन्ना)

माननीय श्री शान्ति भूषण,
विधि, न्याय और कम्पनी कार्य मंत्री,
नई दिल्ली-110001.

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 से सम्बद्ध रिपोर्ट

अपरिहार्य विच्छिन्न-विवाह—विवाह-विच्छेद का एक आधार

विषय सूची

पृष्ठ

अध्याय 1 प्रस्तावना

अध्याय 2 विद्यमान विधि और विवाह-विच्छेद के बारे में वर्तमान सिद्धांत।

अध्याय 3 अपरिहार्य विच्छिन्नता : सिद्धांत।

अध्याय 4 अपरिहार्य विच्छिन्नता क सति‍ा के सिद्धांत के गुणा वगुण ।

अध्याय 5 विवाह-विच्छेद केअन्य आधारों को जारी रखना।

अध्याय 6 अलग अलग रहने की अपेक्षा।

अध्याय 7 सुरक्षण।

अध्याय 8 सिफारिश किए गए संशोधन।

परिशिष्ट

परिशिष्ट : हिन्दू विवाह अधिनियम के अधीन विवाह-विच्छेद के आधार के रूप में अपरिहार्य विच्छिन- विवहा विषय परभारतके विधिआयोग द्वारा जा ी की गई सूची ।

प्रस्तावना

1.1. **प्रस्तावना**—यह रिपोर्ट हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 से सम्बद्ध एक महत्वपूर्ण प्रश्न की बाबत है, अर्थात् क्या अपरिहार्य विच्छिन्न-विवाह को उस अधिनियम[2] के अधीन विवाह विच्छेद का आधार बनाया जाए और यदि बनाया जाए तो किस सीमा तक और किन शर्तों के अधीन ? इस मामले को विधि आयोग ने भारत सरकार के विधि न्याय और कम्पनी कार्य मंत्रालय[1] द्वारा निर्देश किए जाने पर लिया।

1.2. **अपरिहार्य विच्छिन्न विवाह**—अपरिहार्य विच्छिन्न-विवाह को, अब अनेक देशों की विधियों में, विवाह विच्छेद की डिग्री देकर विवाह विघटन का एक अच्छा आधार माना जाता है। रामकली बनाम गोपालदास[2] वाले मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय की एक पूर्ण न्यायपीठ ने अपने निर्णय में इस आधुनिक प्रवृत्ति का ध्यान रखा कि ऐसे संयोजन को कायम रखने पर जोर नहीं देना चाहिए जो बिल्कुल ही छिन्न भिन्न हो गया हो, और कहा

> "यह व्यावहारिक और वास्तविक दृष्टिकोण नहीं होगा, वास्तव में यह अयुक्तियुक्त और अमानवीय होगा कि दोनों पक्षों को उस दशा में भी विवाह का दिखावा बनाए रखने के लिए बाध्य किया जाए जब कि दोनों के बीच पूरी दरार पड़ गई है और उनके कभी भी पति और पत्नी के रूप में रहने की कोई सम्भावना नहीं है।"

ब्लण्ट बनाम ब्लण्ट[3] के मामले में वाइकाउन्ट साइमन एल. सी. विवाह विषयक मामलों में जिन बातों पर विचार करना चाहिए उनका उल्लेख करते हुए कहा :

> "इन चार बातों के साथ में एक अधिक सामान्य प्रकार की पांचवीं बात भी जोड़ना चाहूंगा जिसे वास्तव में मुख्य महत्व दिया जाना चाहिए, अर्थात्, व्यापक रूप में समाज के हित का निर्णय विवाह की बाध्यकारी पवित्रता के प्रति आदर तथा उन सामाजिक परिस्थितियों के बीच सही संतुलन रख कर करना चाहिए जिनसे कि ऐसे संयोजन को जो बिल्कुल छिन्न भिन्न हो गया है, कायम रखने पर जोर देना सार्वजनिक नीति के प्रतिकूल हो जाता है। यह ध्यान देने योग्य है कि हाल के वर्षों में इसका यह प्रभाव हुआ है कि न्यायालय ऐसे अनेक मामलों में अपने विवेक का प्रयोग करने के लिए उत्प्रेरित हुए हैं जिनमें कि पहले के जमाने में डिक्री देने से निश्चय ही इन्कार कर दिया जाता था।"

ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ने तब से मैट्रिमोनियल काजेज एक्ट 1973 अधिनियमित किया है (जो डाइवोर्स रिफार्म एक्ट 1969 का स्थान लेता है)। इस अधिनियम की धारा 7 के अनुसार विवाह विच्छेद के लिए अर्जी इस आधार पर की जा सकती है कि विवाह अपरिहार्यतः विच्छिन्न हो गया है।

---

1 विधि, न्याय और कम्पनी कार्यमंत्री का 3 नवम्बर, 1977 का टिप्पण जो विधायी विभाग की फाइल नं० एक 14(4)-68-विधा-II जिल्द - 11 पृष्ठ 27.

2 रामकली बनाम गोपाल दास (1971) आइ० एल० आर० । दिल्ली 10 (एफ० बी०)

3 ब्लण्ट बनाम ब्लण्ट (1943) आल ई० आर 76, 78 (एच० एल०)

1.3. **सुझाव की जांच**—एक प्रसिद्ध विधिवेत्ता ने यह सुझाव दिया है कि हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1) के साथ विवाह विच्छेद का निम्नलिखित आधार जोड़ दिया जाए :—

> "विवाह अपरिहार्यतः विच्छिन्न हो गया है और पक्षकार अर्जी के दिए जाने के ठीक पहले कम से कम पांच (या दस) वर्ष की अवधि तक अलग अलग रहे हैं ।"

इस सुझाव के पक्ष में यह कहा गया है कि हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 उस परिस्थिति से निपटाने में अपर्याप्त साबित हुआ है जब कि विवाह बिल्कुल ही असफल साबित हुआ हो और इस क्षेत्र में सामाजिक सुधार अनिवार्य है । ऐसी विच्छिन्नता का सबूत यह होगा कि पति और पत्नी पृथक हो गए हैं और पांच या दस वर्ष की अवधि से अलग अलग रह रहे हैं तथा विवाह को पुन वींसर्जित करना या पक्षकारों को पुनः मिलाना असम्भव हो गया है । यह कहा जाता है कि जब एक बार यह पता चल जाए कि विवाह की सफलता की कोई सम्भावना नहीं रही तो कानूनी बन्धन को घसीटते रहने से पति और पत्नी के प्रति क्रूरता होती है और उससे अपराध तथा विवाह को रद्द कराने के लिए धर्म का दुरुपयोग भी होने लगता है । यह भी बताया गया है कि मुसलमान, ईसाई और पारसी विवाह विधियों में विवाह-विच्छेद हिंदू विधि के मुकाबले अधिक आसानी से हो सकता है और हिन्दुओं को, जिन पर कड़े प्रतिबन्ध हैं, अनेक मामलों में धर्म परिवर्तन का सहारा लेना पड़ता है । वैयक्तिक जीवन में यह सामाजिक भेदभाव हटा दिया जाना चाहिए । विशेषकर इस बात को देखते हुए कि अनेक हिन्दू विवाह छोटी आयु में पक्षकारों की सहमति के बिना किए जाते हैं जिसके फलस्वरूप बाद में उनमें विच्छिन्नता आ जाती है । अंत में यह भी कहा जाता है कि हिन्दू विवाह विच्छेद विधि को उदार बनाना चाहिए तथा यूरोप और अन्य देशों की आधुनिक प्रवृत्तियों तथा देश के अन्य समुदायों को लागू विधि के अनुरूप भी बनाना चाहिए। सुझाव के प्रस्ताव का सार संक्षेप में निम्नलिखित शब्दों में दिया है :—

> "प्रस्ताव का सार यह है कि हिन्दू विवाह को उस दशा में जब कि पति और पत्नी 5/10 वर्ष की अवधि तक अलग अलग रहे हों और विसंगति, व्यक्ति संघर्ष या ऐसे ही अन्य कारणों से विवाह अपरिहार्यतः विच्छिन्न हो गया हो, विघटित कर दिया जाना चाहिए जैसा कि प्रगतिवान देशों की अनेक विधि प्रणालियों के अधीन होता है ।"

1.4. **पिछली रिपोर्ट में मूल प्रश्न पर विचार नहीं किया गया**—इस सुझाव ने हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 की धारा 13 से संबंधित एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया है । यह अधिनियम कुछ वर्ष पहले विधि आयोग के समक्ष विचारार्थ आया किन्तु विवाह की विच्छिन्नता को विवाह विच्छेद के लिए एक आधार के रूप में प्रस्तावित करने का प्रश्न आयोग के समक्ष नहीं था । रिपोर्ट में विच्छिनता के सिद्धान्त का कोई निर्देश या उसका कोई केवल प्रासंगिक था।

इसमें कोई संदेह नहीं कि वर्तमान अधिनियम में उपबन्धित विवाह विच्छेद के अनेक विनिर्दिष्ट आधारों के पीछे यह बात है कि वैवाहिक सम्बन्ध को जारी रखना असम्भव है । किन्तु अपने आप में वह अधिनियम के अधीन विवाह विच्छेद का आधार नहीं है । इस अर्थ में वह उपबन्ध जिसका सुझाव दिया गया है एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठाता है ।

---

1 विधि आयोग की उनसठवीं रिपोर्ट (हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 और विशेष विवाह अधिनियम 1954) मार्च 1974)

1.5. **हिन्दू विवाह अधिनियम**—विवाह विच्छेद के बारे में हिन्दू विवाह अधिनियम के सुसंगत उपबन्ध धारा 13-क और 13-ख में दिए गए हैं। यह उल्लेखनीय है कि धारा 13-ख में पारस्परिक सम्मति से विवाह विच्छेद की डिक्री के लिए उपबन्ध है। यह धारा 1976 में जोड़ी गई थी।

अपरिहार्य विच्छिन्न विवाह के आधार पर, जैसा कि हम उसे समझते हैं, विवाह विच्छेद के लिए अर्जी पर न्यायालय के लिए विवाह विच्छेद की डिक्री देने से पूर्व इस बात की जांच करना आवश्यक नहीं होगा कि किस पक्ष का कसूर था और साबित करना पर्याप्त होगा कि पति और पत्नी के संबंध इतने विच्छिन्न हो गए हैं कि पुनर्मिलाप की कोई संभावना नहीं है। इससे झगड़े, मन मुटाव और वैवाहिक जीवन के दौरान ऐसी ही अन्य बातों का, जिनमें से कुछ को पक्षकार बताना न चाहें, साक्ष्य प्रस्तुत करने की आवश्यकता न होगी।

1.6. **प्रश्न सूची**—अपरिहार्य विच्छिन्न विवाह को विवाह विच्छेद का एक आधार बनाने के प्रस्ताव पर विचार करने के सुझाव पर कोई और कार्रवाई करने से पूर्व हमने एक संक्षिप्त सूची[2] जारी करके इस मामले पर विचार आमंत्रित करना उपयुक्त समझा। हम उन सब के आभारी हैं जिन्होंने हमारी प्रश्न सूची के उत्तर में अपने विचार प्रकट किए हैं।

1.7. **विचार विमर्श की स्कीम**—हमारे विचार विमर्श की स्कीम निम्न प्रकार की होगी।

पहले हम हिन्दू विवाह अधिनियम के अधीन विवाह विच्छेद के वर्तमान आधारों की जांच करेंगे। तब हम अपरिहार्य विच्छिन्नता के सिद्धान्त को लेंगे और उस सिद्धान्त के गुणावगुणों पर विचार करेंगे। यदि अपरिहार्य विच्छिन्नता को अपनाना है तो विचार इस बात पर करना होगा कि क्या विवाह विच्छेद के अन्य आधारों को प्रतिधारित रखने रखना होगा या विधि में पहले से उपबन्धित आधारों को आमेलित करने वाले आधार के रूप में केवल अपरिहार्य विच्छिन्नता के व्यापक और अनन्य आधार को उनके स्थान पर रखना होगा। इस प्रश्न पर हम सम्यक अनुक्रम में विचार करेंगे।

यदि अपरिहार्य विच्छिन्नता का सिद्धान्त अपनाना हो तो दूसरा प्रश्न यह होगा कि उसका ठीक ठीक किस प्रकार से अधिनियम में समावेश किया जाए।

हम इस बात की भी जांच करेंगे कि क्या ऐसे आधार का समावेश करने के साथ साथ कोई सुरक्षण भी समाविष्ट किए जाएं।

---

1 विधि आयोग की उनसठवीं रिपोर्ट (हिन्दू विवाहअधिनियम 1955 और विशेष विवहा अधिनियम, 1954), पृष्ठ 12, पैरा 1.20; पृष्ठ 22 और 2.18 और पृष्ठ 66, पैरा 7.5

2 परिशिष्ट देखिए।

अध्याय 2

हिन्दू विवाह अधिनियम के अधीन वर्तमान विधि

2.1. **हिन्दू विवाह अधिनियम के अधीन वर्तमान विधि**—**हिन्दुओं को लागू विवाह** विच्छेद के आधारों से सम्बद्ध वर्तमान विधि हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 **की धारा 13,** 13-क और 13-ख में अन्तर्विष्ट है। धारा 13(1)[1] और 13(1-क)[2] में कुछ ऐसे आधारों का उल्लेख है जिनके अनुसार पति या पत्नी विवाह के विघटन की मांग कर सकते हैं। धारा 13 की उपधारा (2) में इस निमित्त कुछ अतिरिक्त आधार[3] दिए गए हैं जिनका उपयोग केवल पत्नी द्वारा किया जा सकता है। धारा 13-ख[4] हाल ही में अन्तर्विष्ट किया गया एक विशेष उपबन्ध है जिसमें एक वर्ष तक अलग अलग रहने के पश्चात् सम्मति से विवाह विच्छेद के लिए उपबन्ध किया गया है। इस मामले में विधि द्वारा यह अपेक्षित है कि दोनों पक्षों द्वारा अर्जी दी जाए।

हिन्दू विवाह अधिनियम के अधीन विवाह विच्छेद के आधार मुख्यतः तीन वर्गों में आते हैं। पहला है विवाह विषयक त्रुटि का परम्परागत सिद्धान्त। इस विनिर्दिष्ट परिस्थितियों के कारण हुई कुंठा का सिद्धान्त है। सम्मति का सिद्धान्त है। किन्तु बहुत ही सीमित विस्तार के सिवाय जिसकी की सम्यक् अनुक्रम में चर्चा की जायेगी[5] विवाह की विच्छिन्नता का सिद्धान्त नहीं है।

2.2. **हिन्दू विवाह अधिनियम** *1955* **के अधीन वर्तमान स्थिति [धारा** *13(1)*]— अधिनियम के अधीन विवाह विच्छेद के वर्तमान आधारों का संक्षिप्त वर्णन करना सुविधा-जनक होगा। अधिनियम की धारा 13(1) का भावार्थ यह है कि उसके अधीन पति या पत्नी दोनों में से किसी के द्वारा इस आधार पर अर्जी दिए जाने पर विवाह विच्छेद की अनुज्ञप्ति जारी करता है कि—

दूसरे पक्षकार ने विवाह के अनुष्ठापन के पश्चात् अपने पति या पत्नी से भिन्न किसी व्यक्ति के साथ स्वेच्छया मैथुन किया है; या

दूसरे पक्षकार ने विवाह के अनुष्ठापन के पश्चात् अर्जीदार के साथ क्रूरता का व्यवहार किया है; या

दूसरे पक्षकार के अर्जी के पेश किए जाने से ठीक पूर्व कम से कम दो वर्ष की निरन्तर अवधि तक अर्जीदार को अभित्यक् रखा है; या

दूसरा पक्षकार अन्य धर्म में संपरिवर्तित हो जाने के कारण हिन्दू नहीं रहा है; या

---

[1] धारा 13(1) में नो आधार । आगे पैरा 2.2 देखिए।

[2] धारा 13(1क) में दो आधार । आगे पैरा 2.3 देखिए।

[3] धारा 13(2) में चार आधार । आगे पैरा 2.4 देखिए।

[4] आगे पैरा 2.5 देखिए।

[5] आगे पैरा 2.3 और 2.5 देखिए।

दूसरा पक्षकार असाध्य रूप से विकृत चित्त रहा है अथवा निरन्तर या आन्तरायिक रूप से इस प्रकार के और इस हद तक मानसिक विकार से पीड़ित रहा है कि अर्जीदार से युक्तियुक्त रूप से यह आशा नहीं की जा सकती है कि वह प्रत्यर्थी के साथ रहे ;या

दूसरा पक्षकार उग्र और असाध्य कुष्ठ रोग से पीड़ित रहा है ; या

दूसरा पक्षकार संचारी रूप के रतिज रोग से पीड़ित रहा है ; या

दूसरे पक्षकार ने किसी धार्मिक पंथ में प्रवेश करके सन्यास ग्रहण कर लिया है ; या

दूसरे पक्षकार के जीवित होने या न होने के बारे में सात वर्ष या उससे अधिक की अवधि तक उन लोगों ने कुछ नहीं सुना है जिन्होंने उसके बारे में यदि वह जीवित होता तो स्वभाविकतः सुना होता ।

दो स्पष्टीकरण हैं जिनमें "मानसिक विकार" और "अभित्यजन" पदों का अर्थ स्पष्ट किया गया है जो वर्तमान प्रयोजन के लिए महत्वपूर्ण नहीं है ।

2.3. **धारा *13*(क)**—विवाह विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन के लिए अर्जी उसी अधिनियम की धारा 13 (1-क) के अधीन किसी भी पक्षकार द्वारा इस आधार पर दी जा सकेगी—

कि ऐसी कार्यवाही में, जिसके उस विवाह के पक्षकार पक्षकार थे, न्यायिक पृथक्करण की डिक्री के धारण के पश्चात् दो वर्ष या उससे ऊपर की अवधि तक उन पक्षकारों के बीच सहवास का कोई पुनराम्भ नहीं हुआ है ; या

कि ऐसी कार्यवाही में, जिसके उस विवाह के पक्षकार पक्षकार थे, दाम्पत्याधिकार के प्रत्यास्थापन की डिक्री के धारण के पश्चात् दो वर्ष या उससे ऊपर की अवधि तक, उन पक्षकारों के बीच दाम्पत्याधिकारों का कोई प्रत्यास्थापन नहीं हुआ है ।

2.4. धारा 13(2)—उपर्युक्त के अलावा धारा 13(2) के अधीन पत्नी अपने विवाह के विघटन के लिए अर्जी इस आधार पर भी दे सकती है कि विवाह, अधिनियम के प्रारम्भ के पूर्व अनुष्ठापित किया गया था और कि पति ने ऐसे प्रारम्भ के पूर्व फिर विवाह कर लिया था या कि पति विवाह के अनुष्ठापन के पश्चात् बलात्संग, गुदामैथुन या पशुगमन का दोषी रहा है या कि पत्नी को भरण पोषण दिलवाने के लिए पति के विरुद्ध डिक्री या आदेश इस बात के होते हुए भी पारित किया गया है कि पत्नी अलग रहती थी और ऐसी डिक्री या आदेश के पारित किए जाने के समय से एक वर्ष या उससे ऊपर की अवधि भर पक्षकारों के बीच सहवास का पुनराम्भ नहीं हुआ है या कि उसका विवाह (चाहे विवाहोत्तर सम्भोग हुआ हो या नहीं) उसकी पन्द्रह वर्ष की आयु हो जाने के पूर्व अनुष्ठापित किया गया था और उसने पन्द्रह वर्ष की आयु प्राप्त करने के पश्चात् किन्तु अठारह वर्ष की आयु प्राप्त करने के पूर्व विवाह का निराकरण कर दिया है ।

2.5. **विच्छिन्नता का सिद्धान्त धारा *13*(*1*-क) में कहां तक अपनाया गया है**—यह बात ध्यान देने योग्य है कि यद्यपि विवाह की विच्छिन्नता के सिद्धान्त के कुछ आसार[1]

---

1 पीछे देखिए पैरा 2.3 ।

ऊपर संक्षेप में दिए गए धारा 13(1-क) के अधीन दोनों में से किसी पक्षकार के कहने पर विवाह विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन के विशेष उपबन्ध में पाए जा सकते हैं किन्तु उस उपधारा के अधीन आवेदन की एक आवश्यक शर्त यह है कि विवाह विच्छेद के लिए कार्यवाहियों से पूर्व या तो न्यायिक पृथककरण की डिक्री या दाम्पत्याधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री होनी चाहिए। न्यायिक पृथककरण की डिक्री उस दशा के सिवाय पारित[1] नहीं की गई होती जब कि ऐसी परिस्थितियां साबित हो जाएं जिनसे वैवाहिक अपराध या वैवाहिक निर्योग्यता सिद्ध होती हो। इस अर्थ में धारा 13(1-क) के अधीन विवाह विच्छेद के लिए अर्जी अप्रत्यक्ष रूप से कसूर[3] या निर्योग्यता की बात कहलाती है।

इस प्रकार दाम्पत्याधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री उस दशा के सिवाय पारित नहीं की गई होती जब यह साबित हो जाता हो कि प्रत्यर्थी ने अपने को "किसी युक्तियुक्त प्रति हेतु के बिना"[2] दूसरे के साहचर्य से प्रत्याहृत कर लिया है। इस तरह धारा 13 (1-क) के अधीन अर्जी में, जहां तक वह प्रत्यास्थान की किसी पूर्वतर डिक्री पर आधारित है, कसूर की बात भी सम्मिलित है।

धारा 13-ख किसी भी पक्षकार के किसी कसूर के बिना विवाह विच्छेद के सिद्धान्त को सामने लाकर पारस्परिक सम्मति से विवाह विच्छेद के लिए उपबन्ध करती है। ऐसे मामलों में केवल इतना ही आवश्यक है कि विवाह के दोनों पक्षकारों द्वारा मिलकर विवाह विच्छेद के लिए इस आधार पर अर्जी दी जानी चाहिए कि वे एक वर्ष या उससे अधिक की अवधि से अलग अलग रह रहे हैं कि वे एक साथ नहीं रह सके हैं तथा वे इस बात के लिए परस्पर सहमत हो गए हैं कि विवाह का विघटन कर दिया जाना चाहिए। अर्जी दिए जाने की तारीख से छह मास के पश्चात् और उस तारीख के अठारह मास के पूर्व दोनों पक्षकारों द्वारा किए गए प्रस्ताव पर, यदि इस बीच अर्जी वापस नहीं ले ली गई है तो, न्यायालय पक्षकारों को सुनने के पश्चात्, और अर्जी में किए गए प्रकथनों के सही होने के बारे में ऐसी जांच करने के पश्चात् जो वह ठीक समझे, अपना समाधान कर लेने पर विवाह विच्छेद की डिक्री पारित करेगा।

भारत के विधान मंडल ने अभी तक अपरिहार्य विच्छिन्न विवाह के आधार पर प्रत्यक्ष या विनिर्दिष्ट रूप से विवाह विच्छेद मंजूर करने का कोई उपबन्ध अंगीकार नही किया है।

2.6. **विवाह विच्छेद के विभिन्न सिद्धान्त**—विभिन्न देशों में विवाह विच्छेद के आधारों के व्यापक सिंहावलोकन से पता चलता है कि विवाह विच्छेद अनेक सिद्धान्तों पर मंजूर किया जाता है। सर्व प्रथम कसूर के आधार पर विवाह विच्छेद का सिद्धान्त है जो हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 द्वारा अपनाए गए सिद्धान्तों में एक मुख्य सिद्धान्त है। उस अधिनियम में इस सिद्धान्त के उदाहरण जारकर्म, क्रूरता और अभित्यजन[3] तथा (पत्नी या अर्जी कर) द्विविवाह, कुछ लैंगिक अपराध और भरण पोषण[4] देने में असफलता आदि विधि द्वारा स्वीकृत आधार है।

---

1 हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955, धारा 10।

2 हिन्दू विवाह अधिनियम 1955, धारा 9।

3 हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955, धारा 13(1) (i), (क) और (i ख)।

4 हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955, धारा 13(2) (i), (ii) और (iii)।

विवाह विच्छेद का एक और सिद्धान्त वह है जिसके आधार को विशिष्ट प्रकार की बाध्यक परिस्थितियों स वैवाहिक संबंधों की कुंठा के रूप में वर्णित किया जा सकता है। ऐसी परिस्थितियां पैदा हो सकती है जो किसी पक्षकार का कसूर न होते हुए भी विवाह का विघटन आवश्यक बना देती है क्योंकि इन बाधक परिस्थितियों के कारण जो विवाह विषयक त्रुटि नहीं है, कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन आ जाता है।

इस सिद्धान्त के उदाहरण हिन्दू विवाह अधिनियम में निम्नलिखित आधारों पर विवाह विच्छेद मंजूर किया जाना है :—

(क) अन्य पक्षकार का धर्म संपरिवर्तन,[1]

(ख) उन्मत्तता,[2]

(ग) रोग,[3]

(घ) अन्य पक्षकार द्वारा सन्यास ग्रहण,[4]

(ङ) अन्य पक्षकार की लम्बी अवधि तक अनुपस्थिति।[5]

यहां पर यह बताना उचित होगा कि विवाहविच्छेद एक ऐसे आधार पर ही मंजूर किया जाता है जैसे "विधिक प्रणाली की अनुकूलता सुनिश्चित करना" कहा जा सकता है। जब कोई विवाह, कुछ मामलों में, विधि द्वारा निर्धारित अपेक्षाओं की पूर्ति नहीं करता तब विधान मंडल विवाह को अकृत करने के उपबन्ध के बजाए विवेक से काम लेकर विवाह विच्छेद मंजूर कर सकता है। इसका एक उदाहरण (के कहने पर) इस आधार पर कि विवाह[6] के समय पत्नी की आयु कानूनी न्यूनतम आयु से कम थी, विवाह विच्छेद मंजूर करता है। हिन्दू विवाह अधिनियम में यह आधार हाल में ही एक संशोधन द्वारा अन्तःस्थापित किया गया है।

इसके अलावे कुछ विधिक प्रणालियों में विवाह विच्छेद मांग किये जाने पर मंजूर किया जाता है। इसकी सैद्धान्तिक धारणा यह है कि वैवाहिक संबंध के लिए दी गई सम्मति प्रतिसंहरणीय है और कसूर अथवा अन्य बाधक परिस्थितियां दर्शित करने की आवश्यकता के बिना प्रतिसंहृत की जा सकती है।

अनेक देशों में विवाह को स्वतंत्रतापूर्वक सम्मत होने वाले व्यक्तियों के बीच संविदागत संबंध माना जाता है।

सम्मति के आधार का एक परिवर्तित रूप "पारस्परिक सम्मति"[8] द्वारा विवाह विच्छेद के सिद्धान्त में पाया जाता है।

---

1 हिन्दू विवहा अधिनियम, 1955, धारा 13(1) (ii)।

2 हिन्दू विवहा अधिनियम, 1955, धारा 13(1) (iii)।

3 हिन्दू विवहा अधिनियम, 1955, धारा 13(1) (i) और ( )।

4 हिन्दू विवहा अधिनियम, 1955, धारा 13(1) ( )।

5 हिन्दू विवहा अधिनियम, 1955, धारा 13(1) ( )।

6 हिन्दू विवहा अधियनयम, 1955, धारा 13(2) ( )।

2 उदाहरणार्थ देखिए—न्यू यार्क डोमास्टिक रिलेशन्स ल (मकिने 1964) धा 1 10, जिसमें यह अठपत्र एक सिविल संविदा बना रहता है जिसके लिए संविदा करने के योग्य पक्षकारों की सम्मति आवश्यक है।". टिप्पण क देखिए——"विवहा——विच्छेद सम्बन्धी सुतार के पटर्न" (1971-72) (5) कार्नल ला रिव्यू 649, पाड टिप्पण

7 टिप्पण "विवहा विच्छेद सम्बन्धी पैटर्न" (1971-72) 57 कार्नल ला रिव्यू 649।

8 हिन्दू विवहा अधिनियम, 1955, धा रा 13 ख।

ऐसे मामले का आधार भी सम्मति ही है किन्तु सम्बन्धों का प्रत्याहरण सम्मतिजन्य होना चाहिए जैसा कि सम्बन्धों का प्रारम्भिक गठन था। 1976 में यथा संशोधित हिन्दू विवाह अधिनियम इस सिद्धान्त को धारा 13-ख में मान्यता देता है।

इन सिद्धान्तों में से कोई भी सिद्धान्त सम्बन्धों की विच्छिन्नता पर, उस अर्थ में जिसमें उसे आजकल समझा जाता है, उस दशा में भी आधारित नहीं है जिसमें यह कहा जा सकता है कि इन सिद्धान्तों और विच्छिन्नता के सिद्धान्त की कुछ बातें एक सी हैं।

2.7. विच्छिन्नता के सिद्धान्त से तुलना—इन सब सिद्धान्तों की तुलना में विवाह विच्छिन्नता के सिद्धान्त का, जैसा कि हम उसे विवाह विच्छेद का एक आधार उपलब्ध करने के तौर पर समझते हैं, विशेष लक्षण यह है कि कसूर या पक्षकारों के आचरण या स्थिति से संगत अन्य परिस्थितियों का ध्यान रखे बिना उस दशा में विवाह विच्छेद मंजूर किया जाना होता है जब कि विवाह वास्तव में विच्छिन्न हो गया है। विच्छिन्नता की मूलअपेक्षा के साथ कुछ अपेक्षाओं का होना ब्यौरे की बात है जैसी कि वास्तविक विधायी सूत्र की बात है जिसमें यह आधार गुंथा हुआ हो।

अध्याय 3

अपरिहार्य विच्छिन्नता : सिद्धान्त

3.1. **सिद्धान्त का उद्भव**—अब अपरिहार्य विच्छिन्न विवाह के सिद्धान्त की चर्चा करना लाभदायक होगा। पिछले लगभग बीस वर्षों के दौरान विश्व के अनेक देशों में वकीलों, समाज विज्ञानियों और ऐसी बातों से सम्बन्ध रखने वाले व्यक्तियों का ध्यान एक महत्वपूर्ण प्रश्न पर केन्द्रित रहा है, अर्थात् क्या विवाह विच्छेद का आधार पक्षकार का कसूर होना चाहिए या विवाह की विच्छिन्नता ? पूर्ववर्ती को विवाह विषयक अपराध का सिद्धान्त या कसूर का सिद्धान्त कहा जाता है जब कि पश्चात्वर्ती को विच्छिन्नता का सिद्धान्त कहा जाता है।

जहां तक कामनवेल्थ देशों का संबंध है विच्छिन्नता के सिद्धान्त का उद्भव बहुत पहले की अवधि के दौरान वैज्ञानिक और न्यायिक विकास में पाया जा सकता है। उदाहरणार्थ (न्यूजीलैण्ड) डाइवोर्स एण्ड मैट्रिमोनियल कालेज अमेन्डमेंट एक्ट 1920 में पहली बार यह उपबन्ध सम्मिलित किया गया कि तीन वर्ष या उससे अधिक के लिए पृथककरण करार[1] विवाह विच्छेद के लिए न्यायालय को अर्जी देने का आधार है और विवाह विच्छेद को मंजूर करना या न करना (निर्देश के बिना) न्यायालय के विवेकाधीन कर दिया गया है। इस कानून द्वारा दिए गए विवेक का प्रयोग न्यूजीलैण्ड में एक मामले में किया गया जिसका प्रकाशन 1921 में हुआ।

जे. ने एक पैरा में, जो बहुत महत्वपूर्ण हो गया है, विच्छिन्नता के सिद्धान्त को निम्नलिखित शब्दों में व्याख्या की :—

> "मैं समझता हूं कि विधानमंडल का आशय यह माना जाना चाहिए कि तीन वर्ष के पृथककरण को इस न्यायालय द्वारा प्रथम दृष्टया विवाह विच्छेद के अच्छे आधार के रूप में स्वीकार किया जाए। जब कि वैवाहिक संबंध उस अवधि में वस्तुतः समाप्त हो गया है तो उसे विधितः भी समाप्त हो जाना चाहिए जब तक कि इसके प्रतिकूल विशेष कारण न हो। सामान्यतः यह बात पक्षकारों के हित में या जनता के हित में नहीं है कि एक पुरुष और स्त्री विधितः पति और पत्नी के रूप में बंधे रहें जब कि काफी लम्बी अवधि से वे वस्तुतः वैसे नहीं रहे हैं (ऐसे पृथककरण की दशा में विवाह के मूल प्रयोजन कुंठित हो जाते हैं और उस विवाह का आगे जारी रहना सामान्यतया निरर्थक ही नहीं बल्कि हानिकारक भी है।"

3.2. **अपरिहार्य विच्छिन्नता का सैद्धान्तिक आधार**—अपरिहार्य विच्छिन्नता को विवाह विच्छेद के एक आधार के रूप में समाविष्ट करने का सैद्धान्तिक आधार ऐसा है जिससे अब तक वकील और अन्य लोग परिचित हो गए हैं। विवाह विच्छेद के आधार को किसी विशिष्ट अपराध या विवाह विषयक निर्योग्यता तक निर्बन्धित रखने से ऐसे

---

1 पैट्रोफ्रिश एम०यवैब, "रीसेन्ट चेंजेज इन यू०के० एण्ड न्यूजीलैण्ड डाइवोर्सयला" (1965) 14 एल० सी०एल०क्यू० 194, 195।

2 लोड थयनाम लौडर (1921) न्यूजीलैण्ड ला रिपोर्ट 876, जैफरीज में उद्धृत, "मैट्रिमानियल फाल्ट इजइट नाव रेलेवेन्ट" (1972) न्यूजीलैण्ड ला जर्नल 513, 515।

मामलों में अन्याय होता है जिनके में स्थिति ऐसी है कि यद्यपि दोनों पक्षकारों में से किसी का भी कसूर नहीं है या कसूर इस प्रकार का है कि विवाह के पक्षकार उसे प्रकट करना नहीं चाहते फिर भी ऐसी स्थिति पैदा हो गई है कि विवाह क्रियान्वित नहीं हो सकता। वह विवाह बाहरी दृष्टि से पूर्णतः विवाह प्रतीत होता है किन्तु वास्तव में वैसा नहीं है। जैसा कि अक्सर कहा जाता है विवाह तो शंख मात्र है जिसमें से असली पदार्थ निकल गया है। यह कहा जाता है कि इस प्रकार की परिस्थितियों में विवाह को दिखावे के रूप में कायम रखने का कोई उपयोग नहीं है जब कि भावानात्मक और अन्य बन्धन जिन्हें विवाह के तत्व माना जाता है समाप्त हो गए हैं।

विवाह के सारपूर्ण और वास्तविक रूप में अस्तित्वशील न रहने के पश्चात् विवाह विच्छेद से इन्कार करने का कोई कारण नहीं है। पक्षकार ही इस बात का फैसला कर सकते हैं कि क्या उनका पारस्परिक सम्बन्ध उसकी पूर्ति करता है जो कि वह चाहते हैं। विवाह विच्छेद को एक कठिन परिस्थिति का हल और उससे निकलने का मार्ग समझना चाहिए। ऐसा विवाह विच्छेद पिछले दोषों से सम्बन्ध नहीं रखता किन्तु पक्षकारों और बच्चों का नई स्थिति और हालातों के साथ ऐसे सर्वोत्तम संतोषजनक आधार का विकास करके समझौता करने से संबंधित है। जिस पर कि वे नई परिस्थितियों में अपना सम्बन्ध विनियमित कर सकें।

3.3. **विवाह विषयक कसूर के सिद्धान्त की कमियां**—"विवाह विषयक कसूर" के सिद्धान्त की कमियों का वर्णन अनेक बार किया जा चुका है। 1969 की मई 22 को चर्च आफ स्काटलैंड की जनरल असेम्बली ने अपने भारत एण्ड सोशल वैलफेयर बोर्ड की रिपोर्ट स्वीकार की जिसमें यह सुझाव था कि वैवाहिक अपराधों के स्थान पर विच्छिन्नता का सिद्धान्त रख दिया जाए।

उन्होंने अपने मूल सुझावों में जो कहा है उसे उद्धृत करना लाभदायक होगा[1]—

"विवाह विशयक अपराध अधिकतर विवाह के बिगड़ने के कारण की बजाए उसके परिणाम होते हैं। विवाह विच्छेद के अभियोगात्मक सिद्धान्त से विवाह विषयक अपराधों को प्रोत्साहन मिलता है, कड़वाहट बढ़ती है और पहले से ही पड़ी हुई दरार अधिक विस्तृत हो जाती है। दोनों पक्षकारों में से कम से कम एक द्वारा दूसरे के साथ न रहने के फैसले के परिणामस्वरूप कम से कम दो वर्ष की अवधि लगातार पृथककरण को विवाह विच्छिन्नता के एक मात्र साक्ष्य के रूप में मानना चाहिए।"

जब एक बार पक्षकार पृथक हो जाएं और वह पृथककरण पर्याप्त लम्बी अवधि[2] तक जारी रहे तथा पक्षकारों में से एक ने विवाह विच्छेद के लिए अर्जी दी हो तो यह मान लिया जा सकता है कि विवाह विच्छिन्न हो गया है। न्यायालय को निस्संदेह पक्षकारों में मेल कराने का प्रयत्न करना चाहिए, फिर भी यह पाया जाता है कि विच्छिन्नता दूर नहीं की जा सकती तो विवाह विच्छेद से इन्कार नहीं करना चाहिए। जो विवाह क्रियान्वित नहीं हो सकते और जो पर्याप्त समय से प्रभावहीन हो गए हैं विधि में उनके परीक्षण के परिणाम निश्चय ही पक्षकारों के लिए कष्टकारी होंगे। संक्षेप में ये ही विवाह विच्छेद के आधार के रूप में अपरिहार्य विच्छिन्नता के सिद्धान्त की मुख्य अभिधारणाएं हैं।

---

1 हाउस आफ लार्ड्स डिबेट में तारीख 30 जून 1969 को लार्ड चान्सलर ने इन सुझावों की चर्चा की। सी प्रो पृष्ठ 319।

अध्याय 4

अपरिहार्य विच्छिन्नता के सिद्धान्त के गुणावगुण

4.1. **प्रश्न**—हमारी प्रश्नसूची के प्रश्न 1 ने मुख्य प्रश्न पर विचार आमंत्रित किए। प्रश्न इस प्रकार था[1] :—

> "**प्रश्न 1.** क्या आप इस सुझाव से सहमत हैं कि विवाह अपरिहार्य विच्छिन्नता को विवाह विच्छेद की डिक्री देने का एक अच्छा आधार बनाने के लिए हिन्दू विवाह अधिनियम में संशोधन किया जाए ?"

4.2. **समर्थन के कारण**—इस प्रश्न का उत्तर देने में हमें परिवार के बदलते हुए स्वरूप का ध्यान रखना होगा। परिवार अधिक लोकतांत्रिक और अधिक समतावादी होता जा रहा है। पति और पत्नी दोनों न केवल परिवार के घर में हिस्सा बटाते हैं बल्कि कुछ मामलों में वे एक दूसरे के उपार्जनों में भी हिस्सा बटाते हैं, महिलाओं के क्रियाकलापों में वृद्धि के कारण परिवार एक प्रकार का संघ सा बनता जा रहा है। इसलिए यह आवश्यक है कि यदि संघ को कार्यान्वित नहीं किया जा सकता तो उसकी वैध मंजूरी भी वापस ली जानी चाहिए।

इस आपत्ति के उत्तर में कि अपरिहार्य विवाह विच्छिन्नता का आधार अस्पष्ट है यह कहा जा सकता है कि अर्जीदार को न्यायालय का एक मूर्त तथ्य की बाबत समाधान करना पड़ता है और वह है पर्याप्त लम्बी अवधि के लिए अलग रहना। इस प्रकार न्यायाधीशों को (किसी संकलपना पर नहीं बल्कि) तथ्यों पर न्यायनिर्णय करना होता है—यह प्रश्न या उनके समक्ष इस बाबत साक्ष्य कि क्या पक्षकार किसी विनिर्दिष्ट अवधि से अलग अलग रह रह रहे हैं।

मुख्य रूप से कसूर पर आधारित विवाह विच्छेद की विधि विच्छिन्न विवाह से निपटने के लिए अपर्याप्त है। कसूर के सिद्धान्त के अधीन दोष साबित करना होता है, विवाह विच्छेद न्यायालयों के समक्ष मनुष्य के ऐसे व्यवहार के ठोस उदाहरण प्रस्तुत किए जाते हैं जिनसे विवाह व्यवस्था बदनाम हो जाएगी। विवाह विषयक अपराध के सिद्धान्त के कारण न्यायाधीश और वकील कभी कभी अषमर्जिकों जैसा बनना पड़ता है। वैवाहिक जीवन की बहुत अश्लीलताओं को वकीलों को खोजना और प्रकाशित करना होता है और न्यायाधीशों को उनका सामना करना होता है। इसलिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि वर्तमान विपक्षी प्रणाली में तरह तरह के आरोप न्यायालय में खुले आम एक दूसरे पक्ष पर लगाए जाते हैं।

हमें विवाह विच्छेद के उस पुराने कानून पर आश्रित नहीं रहना चाहिए जिसमें पुरुषों और स्त्रियों को निर्दोष या दोषी पाना आवश्यक होता है। यह वांछनीय है कि लम्बे अर्से तक चलने वाले क्रूरता के मामलों में या कसूर पर आधारित मामलों में जिस प्रकार खुले आम अश्लील बातों का बखान होता है उससे बचा जाए। यदि विच्छिन्न विवाह

---

1 प्रश्न।

के आधार पर विवाह विच्छेद मंजूर कर दिया जाए तो उपर्युक्त प्रकार की अवांछनीय बातों से बचा जा सकेगा । यदि हजारों स्त्री और पुरुष समाज में अपनी स्थिति को विनियमित करने के लिए जी जान से इच्छुक हैं किन्तु वे वैसा नहीं कर सकते तो इसे हम विवाह के प्रति लोगों की सम्मति की भावना में वृद्धि नहीं कर सकते । लोगों को उस दशा में पुनर्विवाह करने योग्य होने देना चाहिए जब कि वे ऐसे विवाह के बारे में मृत्यु प्रमाण-पत्र प्राप्त कर सकते हैं जिस विवाह की बहुत पहले से ही मृत्यु हो चुकी है ।

4.3. **आपत्तियां**—इस आपत्ति पर पहले ही[1] विचार किया जा चुका है कि विवाह विच्छेद के आधार के रूप में अपरिहार्य विच्छिन्नता अस्पष्ट है । उसके बारे में अन्य आपत्तियों पर विचार किया जाना चाहिए —

(क) अपरिहार्य विच्छिन्नता पति या पत्नी को अथवा दोनों में से किसी एक को भी अपनी मर्जी पर विवाह को समाप्त करने आदि इस प्रकार विवाह आजीवन मेल व्यवस्था की बजाए ऐसी चीज हो जाएगा जिसे जब चाहे तब समाप्त किया जा सकता है ।

(ख) यह बात मूल सिद्धान्त के प्रतिकूल है कि किसी भी व्यक्ति को अपनी ही गलती का लाभ उठाने दिया जाए ; किसी पति या पत्नी को जो विवाह की विच्छिन्नता के लिए जिम्मेदार हो दूसरे पक्षकार की मर्जी के खिलाफ विवाह विच्छेद प्राप्त करने के लिए ऐसी विच्छिन्नता का आश्रय नहीं लेने देना चाहिए । पति या पत्नी में से किसी एक को एक विनिर्दिष्ट अवधि तक पृथक रहने के पश्चात् दूसरे की मर्जी के खिलाफ उसके विरुद्ध विवाह विच्छेद प्राधिकृत करने से विधि द्वारा पहली बार इस सिद्धान्त को मान्यता दी जाएगी कि कोई व्यक्ति अपनी ही गलती का लाभ उठा सकता है ।

विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के आधार पर विवाह-विच्छेद मंजूर करने के विरुद्ध समय समय पर की गई ये आपत्तियां, हमारी राय में, समग्र रूप में सफल नहीं हो सकती । इनके फलस्वरूप केवल यही हो सकता है कि कुछ आपत्तियों का सामना करने और कुछ आशंकाओं को दूर करने के उद्देश्य से, सुसंगत विधान में कुछ सुरक्षण अन्तःस्थापित कर दिए जाएं ।

4.4. **अपनी गलती का स्वयम् लाभ न उठाने का सिद्धान्त पहले ही परिवर्तित**—हिन्दू विवाह अधिनियम में इस सिद्धान्त का अनुवर्तन नहीं किया गया है कि कोई भी अपनी गलती का स्वयम् लाभ नहीं उठा सकता । इस प्रसंग में, हम उस अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (1क) के खण्ड का निर्देश करना उपयुक्त समझेंगे । उस खण्ड के अनुसार विवाह का कोई भी पक्षकार, विवाह इस अधिनियम के प्रारम्भ के चाहे पूर्व अनुष्ठापित हुआ हो चाहे पश्चात् विवाह विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन के लिए इस आधार पर अर्जी उपस्थापित कर सकेगा कि ऐसी कार्यवाही में पारित, जिसके उस विवाह के पक्षकार पक्षकार थे, दाम्पत्याधिकार के प्रत्यास्थापन की डिक्री के पश्चात् दो वर्ष या उससे ऊपर की अवधि भर, उन पक्षकारों के बीच दाम्पत्याधिकारों का कोई प्रत्यास्थापन नहीं हुआ है । इस उपबन्ध में यह बात स्पष्टतः लक्षित है कि वह पक्षकार भी जो वहां तक दोषी रहा है जहां तक वह दाम्पत्याधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री का पालन करने में असफल रहा है इस आधार पर विवाह विच्छेद की डिक्री के लिए आवेदन कर सकता है कि ऐसी कार्यवाही में पारित, जिसमें उस विवाह के पक्षकार थे, दाम्पत्याधिकार के

[1] पीछे पैरा 2 देखिए ।

प्रत्यास्थापन की डिक्री के पश्चात् दो वर्ष भी उससे ऊपर की अवधि भर उन पक्षकारों के बीच दाम्पत्याधिकारों का कोई प्रत्यास्थापन नहीं हुआ है। ऐसा पक्षकार यद्यपि स्वयम् दोषी है इस प्रकार अपनी गलती का लाभ उठाएगा। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि हिन्दू विवाह अधिनियम के उपबन्धों के अधीन जैसे कि वे इस समय हैं, कोई व्यक्ति अपनी ही गलती का लाभ नहीं उठा सकता।

4.5. **विच्छिन्नता के बारे में सिफारिश**...विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के सिद्धान्त के गुणावगुणों पर विचार करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि विवाह की इस प्रकार की विच्छिन्नता हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के अधीन विवाह विच्छेद की डिक्री मंजूर करने के लिए उस दशा में जब विनिर्दिष्ट [1]अवधि के लिए अलग अलग रहने वाले पक्षकारों ने साबित कर दिया हो और ऐसे सुरक्षणों के अधीन एक अच्छा आधार होना चाहिए जिनकी बाद में इस रिपोर्ट[2] में सिफारिश कर रहे हैं।

ऐसे आधार को समाविष्ट करने के समर्थन में हमें विभिन्न दलीलों को दुहराने की जरूरत नहीं है जिनकी हम पहले के ही विचार विमर्श में चर्चा कर चुके हैं। हम अपना निष्कर्ष निकालने में मुख्यतः इस बात से प्रभावित हुए हैं कि जब एक बार विवाह इस प्रकार विच्छिन्न हो गया है कि उसका पुनस्थापन सम्भव नहीं है तब विधि के लिए उस बात को ध्यान में लेना अवस्वभाविक होगा तथा भावनात्मक सूत्र के समाप्त हो जाने पर भी विधिक बन्धन को कायम रखना समाज के लिए हानिकारक और पक्षकारों के हितों के लिए क्षतिकर होगा। ऐसा मार्ग अपनाने से लगातार झगड़े, स्थायी कड़वाहट को प्रोत्साहन मिलेगा और अवसर अनैतिकता भी पैदा हो सकती है। जहां लम्बी अवधि तक बराबर पृथक्करण रहा है वहां यह मान लेना उचित ही होगा कि वैवाहिक बन्धन अब प्रत्यास्थापित नहीं हो सकते। विधिक बन्धन द्वारा समर्थित होते हुए भी एक प्रकार का उपहास हो जाता है। उस बन्धन को तोड़ देने से इन्कार करने के कारण विधि ऐसे मामलों में विवाह की पवित्रता की सहायक नहीं होती। इसके विपरीत वह पक्षकारों की अनुभूतियों और भावनाओं की ओर बिल्कुल भी ध्यान नहीं देती।

सार्वजनिक हित में यही जरूरी नहीं है कि वैवाहिक प्रमास्थिति जहां तक, जहां तक और जब कभी भी सम्भव हो कायम रहनी चाहिए बल्कि यह भी जरूरी है कि न्यायालय को इस बात के लिए सशक्त बनाना चाहिए कि जो विवाह वस्तुतः निष्क्रिय हो गया हो वह उसे विधितः भी निष्क्रिय घोषित कर दे। जब कोई विवाह इतना छिन्न भिन्न हो गया है कि उसके पुनरुद्धार की कोई आशा नहीं है तब उस बात को मान्य कर लेना लोक हित में होगा। दिखावे बनाए रखने से निश्चय ही अनैतिकता पैदा हो सकती है और इसी बात की सम्भावना है कि विवाह बन्धन को विघटित करने की अपेक्षा वह लोकहित के लिए अधिक हानिकारक हो।

चूंकि ऐसा कोई स्वीकृत तरीका नहीं है जिससे पति या पत्नी को दूसरे के साथ पुनः जीवन बिताने को बाध्य किया जा सके इसलिए पक्षकारों को हमेशा के लिए एक ऐसे विवाह सूत्र में बांधे रखने से कोई लाभ नहीं होगा जो कि वास्तव में समाप्त हो गया हो। विवाह का अर्थ है घर में आजीवन सहवास। जब लगातार सहवास की सम्भावना न रहे तब विधिक बन्धन को भी विघटित कर देना चाहिए।

---

1 विनिर्दिष्ट अवधि के लिए आगे अध्याय 6 देखिए।

2 सुरक्षणों के बारे में आगे अध्याय 7 देखिए।

4.6. **प्रश्न सूची के उत्तर**—हम यह कह सकते हैं कि हमारी प्रश्न सूची के जो उत्तर[4] प्राप्त हुए हैं उनमें से अधिकांश ने विवाह विच्छेद के इस आधार को हिन्दू विवाह अधिनियम में सम्मिलित करने का पक्ष लिया है।

एक महिला अधिवक्ता[1] से प्राप्त एक उत्तर में कहा गया है कि अब हमें केवल उन मामलों के लिए उपबन्ध करना चाहिए जिनमें (विवाह विच्छेद की) राहत दी जानी चाहिए किन्तु कुछ कठिनाइयों के कारण नहीं दी जा सकती है। अनिच्छुक पत्रकारों को एक साथ रहने के लिए बाध्य करने की आवश्यकता कम करने की वांछनीयता को मानते हुए उपर्युक्त उत्तर में साथ साथ ही इस बात पर जोर दिया गया है कि विवाह विच्छेद को बिल्कुल ही आसान नहीं बनाना चाहिए क्योंकि उससे महिलाओं के लिए भारी असुरक्षा पैदा हो जाएगी। उत्तर में कहा गया है कि इस निष्कर्ष पर पंहुचने के लिए कि विवाह अपरिहार्यतः विच्छिन्न हो गया है वैवाहिक अपराध किए जाने के प्रकार का कुछ साक्ष्य होना चाहिए। इसके साथ ही यह भी कहा गया है कि हमें दोष प्रभाजन की आवश्यकता से दूर रहना चाहिए किन्तु हमारा दृष्टिकोण जैसा कि हम पहले भी बता चुके हैं अपरिहार्य विच्छिन्न विवाहों की दशाओं में इस बात पर ध्यान दिए बिना कि किसी पक्षकार ने कसूर किया है या नहीं, विवाहविच्छेद के लिए उपबन्ध करना है।

4.7. एक उच्च न्यायालय के न्यायाधीश[1] ने इस सुझाव से मतभेद प्रकट किया है कि विवाह विच्छेद की डिक्री देने के लिए विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता को एक अच्छा आधार बनाने के निमित्त हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 में संशोधन किया जाना चाहिए। उनका विचार है:

> "मेरी राय में ऐसे संशोधन से मानव विदग्धता को प्रोत्साहन मिलेगा और जितनी समस्याओं को हल करना चाहा गया है उससे कहीं अधिक समस्याएं पैदा हो जाएंगी।"

किन्तु अन्यत्र[2] बताए गए कारणों से हम बहुमत की इस राय से सहमत होना उपयुक्त समझते हैं कि विवाहित की विच्छिन्नता विवाह विच्छेद की डिक्री देने के लिए एक अच्छा आधार है।

4.8. **एक उच्च न्यायालय की आपत्ति पर विचार**—हम यहां पर यह बता देना चाहेंगे कि एक उच्च न्यायालय[3] के न्यायाधीशों ने अपरिहार्य विच्छिन्नता को विवाह विच्छेद के एक आधार के में समाविष्ट करने के विरुद्ध मत प्रकट किया है। उच्च न्यायालय के उत्तर में एक बात यह कही गई है कि यह कहना बहुत कठिन है कि पति और पत्नी केवल इस कारण कभी भी एक साथ नहीं रहेंगे कि उन दोनों में कोई झगड़ा हुआ है और उस समय यह प्रतीत होता है कि उनके एक साथ रहने की कोई सम्भावना नहीं है। हम इस बात से सहमत हैं कि केवल इस बात का कि पक्षकारों के बीच झगड़ा हुआ है कि उस समय वे अलग अलग रह रहे हैं, यह अर्थ नहीं है कि विवाह समाप्त हो गया है। किन्तु हम सादर बताना चाहते हैं कि हमारे प्रस्ताव में विवाह की विच्छिन्नता मात्र नहीं है बल्कि ऐसी विच्छिन्नता है जो अपरिहार्य है। यह सच है कि सम्भव हो सकता है कि जो बात एक व्यक्ति को अपरिहार्य प्रतीत होती है वह दूसरे को उस समय तक वैसी प्रतीत न हो किन्तु ऐसी परिस्थिति को अनिश्चित काल तक जारी रहने नहीं दिया जा सकता, और

---

1 क्रम सं० 19।

2 क्रम सं० 25 S

3. पीछे देखिए पैरा 4.5।

4. क्रम सं० 30.51।

कोई न कोई ऐसा समय होना चाहिए जब कि एक पक्षकार को इस बारे में न्यायालय का निर्णय प्राप्त करने की अनुज्ञा दी जानी चाहिए कि क्या विवाह के प्रति झाप्त की सम्भावना है या नहीं ? मनुष्य का जीवन काल थोड़ा ही होता है और इसलिए दुखदायी परिस्थितियाँ को अनिश्चित काल तक जारी नहीं रहने देना चाहिए । किसी न किसी प्रक्रम पर रोक लगानी ही पड़ेगी । विधि ऐसी परिस्थितियों के प्रति आंखें नहीं मूंद सकती और उनसे पैदा होने वाली ऐसी आवश्यकताओं के पर्याप्त प्रत्युत्तर से इन्कार नहीं कर सकती है जिनका कि अनुभव किया जाए ।

हमें ऐसा मालूम होता है कि सामाजिक हित और न्याय संतुलन इस बात को सम्यक् महत्व देने के पक्ष में है कि जहां पक्षकार विनिर्दिष्ट समय से अलग अलग रह रहे हैं वहां यह मानना चाहिए कि उनका विवाह नाममात्र का है । ऐसी परिस्थिति का आ जाना बड़े दुर्भाग्य की बात है किन्तु एक बार जब ऐसी परिस्थिति आ गई है तो बुद्धिमानी इस बात में है कि उसकी ओर से आंखें मूंद लेने के बजाए उसे एक तथ्य के रूप में स्वीकार कर लिया जाए और इस पर विचार किया जाए कि उससे सब से अच्छी प्रकार किस तरह से निपटा जाए ।

गुजरात सरकार[1] ने विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता को विवाह विच्छेद का एक आधार बनाने के सुझाव का समर्थन करते हुए यह कहा है कि यह अच्छा होगा कि पति पत्नी को पहले विवाह के पुनर्मिलाप की कोई सम्भावना न होते हुए विच्छिन्न होने पर विवाह के पुनर्निर्माण की अनुज्ञा दी जानी चाहिए । हम समझते हैं इस बात में काफी बल है ।

4.9. **समाज कल्याण विभाग की आपत्ति पर विचार**--भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के समाज कल्याण विभाग ने यह मत[2] प्रकट किया है कि "विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता" को विवाह विच्छेद की डिक्री देने का आधार बनाना इसलिए अनावश्यक है कि विवाह विच्छेद प्राप्त करने के प्रयोजन के लिए हिन्दू विवाह अधिनियम और विवाहविधि संशोधन अधिनियम, 1976 में ऐसे पर्याप्त आधार मौजूद हैं जिनके अन्तर्गत विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता आ जाती है ।

हमने इस बात पर काफी विचार किया है किन्तु हम इसे स्वीकार करने में असमर्थ हैं । जैसा कि पहले[3] बताया जा चुका है 1976 के संशोधन के पश्चात् भी हिन्दू विवाह अधिनियम में अन्तर्विष्ट आधारों में विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता का स्पष्ट रूप से समावेश नहीं है । इसमें संदेह नहीं कि हिन्दू विवाह अधिनियम में 1976 में किए गए संशोधनों में अपरिहार्य विच्छिन्नता एक सुसंगत तथ्य के रूप में, आवश्यक विवक्षा द्वारा आ जाती है । किन्तु 1976 के संशोधनों के पश्चात् भी अधिनियम में कोई ऐसा आधार नहीं है जिसमें विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के आधार पर विवाह विच्छेद के लिए स्पष्ट रूप से उपबंध किया गया हो । जैसा कि पहले[4] बताया जा चुका है, हमने जिस संशोधन का सुझाव दिया है उसका प्रयोजन विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के आधार पर विवाह विच्छेद के लिए उस दशा में ही उपबन्ध करना है जब कि पति या पत्नी में कोई एक अर्जी देने में सम्मिलित न हो या ऐसी अर्जी का विरोध करे । हमारे संशोधन में आगे

---

1 क्रम सं० 31 ।

2 क्रम सं० 33 ।

3 पीछे के पैरा 2.2 से पैरा 2.7 तक ।

4 पीछे का पैरा 2 5 ।

यह सुझाव भी है कि पति और पत्नी के पर्याप्त लम्बे समय से अलग अलग रहने को विवाह की विच्छिन्नता का सबूत माना जाएगा। वर्तमान विधि में ऐसी परिस्थिति का सामना करने के लिए कोई उपबन्ध नहीं है। यहां पर यह दुहराना भी उपयुक्त होगा कि विधि में हमने जिस परिवर्तन की सिफारिश की है उससे वैवाहिक जीवन की अश्लील बातों का खुले आम बखान करने से बचा जा सकेगा।[1]

---

[1] पीछे के पैरा 4.2 से तुलना कीजिए।

अध्याय 5

विवाह विच्छेद के अन्य आधारों को जारी रखना

5.1. **अन्य आधारों को जारी रखने का प्रश्न**—एक प्रश्न जिसका विनिश्चय करना है यह है कि क्या हिन्दू विवाह अधिनियम के अधीन विवाह विच्छेद के एक आधार के रूप में विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के समावेश के फलस्वरूप विवाह-विच्छेद के अन्य आधार जो पहले से ही अधिनियम में विद्यमान हैं, उदाहरणार्थ जारकर्म, क्रूरता या अभित्यजन, समाप्त कर दिए जाएं या क्या उन अन्य आधारों को भी जारी रखा जाए। कुछ विदेशी लेखकों ने यह राय प्रकट की है कि विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के आधार के समावेश के पश्चात् अन्य आधार जारी न रखे जाए। किन्तु हम इस राय को मानने में असमर्थ हैं क्योंकि हमारी राय में विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता को विवाह विच्छेद के एक आधार के रूप में समाविष्ट करने से विवाह विच्छेद के अन्य आधार, जो पहले से ही विधि में विद्यमान हैं, अनावश्यक नहीं हो जाते, नए और पुराने दोनों आधारों को रखे रखने में कोई अन्तरिक विरोध या दोष नहीं है।

इंग्लैण्ड के मैट्रिमोनियल काजेज एक्ट, 1973 की धारा 1 ही ऐसी धारा है जो विवाह विच्छेद की डिक्री से संबंधित है। उस धारा के अनुसार विवाह के दोनों पक्षकारों में से किसी पक्षकार द्वारा न्यायालय को इस आधार पर विवाह विच्छेद की अर्जी दी जा सकती है कि विवाह अपरिहार्यतः विच्छिन्न हो गया है। उस धारा की उपधारा (2) में वे परिस्थितियां बताई गई हैं जिससे न्यायालय यह अनुमान लगा सकता है कि विवाह अपरिहार्य रूप से विच्छिन्न हो गया है। वे परिस्थितियां हैं, :

(क) कि प्रत्यर्थी ने जार कर्म किया है और अर्जीदार के लिए प्रत्यर्थी के साथ रहना असहनीय है ;

(ख) कि प्रत्यर्थी ने इस प्रकार का व्यवहार किया है कि अर्जीदार से युक्तियुक्त रूप में यह आशा नहीं की जा सकती कि वह प्रत्यर्थी के साथ रहे ;

(ग) कि प्रत्यर्थी ने अर्जी दिए जाने के ठीक पूर्व की कम से कम दो वर्ष की लगातार अवधि से अर्जीदार का अभित्यजन कर रखा है ;

(घ) विवाह के पक्षकार अर्जी दिए जाने के ठीक पूर्व कम से कम दो वर्ष की लगातार अवधि से अलग रहे हैं और प्रत्यर्थी विवाह विच्छेद की डिक्री दिए जाने से सम्मत है ,

(ङ) कि विवाह के पक्षकार अर्जी दिए जाने के ठीक पूर्व कम से कम पांच वर्ष की लगातार अवधि से अलग रह रहे हैं।

उपर्युक्त से यह प्रतीत होगा कि इंगलैंड की विधि के अनुसार विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता का अनुमान उनके किस्म की परिस्थितियों से लगाया जा सकता है। इसके

---

1. मैट्रिमोनियल काजेज एक्ट, 1973, धारा 1

विपरीत हमने[1] जिस संशोधन का सुझाव दिया है उसके अनुसार विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि विवाह के पक्षकार तीन वर्ष से अधिक की अवधि के लिए लगातार अलग रह रहे हैं। विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के विषय पर इंगलैंड की विधि हमारे द्वारा सुझाए गए संशोधन के मुकाबले काफी अधिक व्यापक है और उसके अन्तर्गत जारकर्म, क्रूरता या अभित्यजन जैसी परिस्थितियां भी आती हैं। चूंकि हम विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के सबूत के लिए जारकर्म, क्रूरता या अभित्यजन जैसी बातें नहीं ला रहे हैं इसलिए यह आवश्यक है कि दोनों पक्षकारों में से किसी भी एक के विरुद्ध जारकर्म, क्रूरता या अभित्यजन के आरोप से संबंधित स्पष्ट उपबन्ध जो हिन्दू विवाह अधिनियम में हमने पहले से ही रखे हैं जारी रहने चाहिए। इसलिए हमारी यह राय है कि विवाह विच्छेद की डिक्री प्राप्त करने के लिए विवाह की अपरिहार्यह विच्छिन्नता का आधार उन आधारों के अतिरिक्त होगा जो हिन्दू विवाह अधिनियम के वर्तमान उपबन्धों में पहले से ही मौजूद हैं।

5.2. **अन्य आधारों को रखे रहना**—इसके प्रतिकूल मत के सैद्धान्तिक रूप से आकर्षक होने के बावजूद हम यह समझते हैं कि कुछ ऐसी व्यावहारिक बातें हैं जिनको यों ही टाला नहीं जा सकता।

5.3. विवाह विच्छेद के वर्तमान आधार—उदाहरणार्थ हिन्दू विवाह अधिनियम में उपबन्धित विवाह विच्छेद के कुछ आधारों को लीजिए। अधिनियम में जारकर्म या क्रूरता जैसे विभिन्न आधारों पर विवाह विच्छेद के लिए उपबन्ध हैं। हमारी राय में ऐसे आधार विवाह विच्छेद की मंजूरी देने के लिए पर्याप्त होने चाहिएं।

ऐसे मामलों में पति या पत्नी के जारकर्म या क्रूरता के कार्यों को करने के कथित दुराचरण के कारण विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के अतिरिक्त आधार की अपेक्षा करना उचित नहीं होगा। ऐसा करने का अर्थ वर्तमान उपबन्ध को कहीं अधिक कड़ा करना होगा। हो सकता है कि पति या पत्नी के ऐसे दुराचरण की दशा में विवाह की विच्छिन्नता का अतिरिक्त सबूत मांगना आवश्यक होना चाहिए। हमेशा उत्तर यह है कि ऐसा नहीं होना चाहिए। इसलिए हिन्दू विवाह अधिनियम में उपबन्धित विवाह विच्छेद के आधार रखे रहने चाहिए। हो सकता है कि कभी कभी अतिव्याप्ति हो जाए जहां कि विवाह विच्छेद के विनिर्दिष्ट आधार (उदाहरणार्थ क्रूरता) से पक्षकार अलग अलग रहें और विवाह विच्छिन्न हो जाए। किन्तु अपने आप में यह एक ऐसी निश्चायक बात नहीं है जिससे विवाह विच्छेद के वर्तमान आधारों को समाप्त कर दिया जाए।

अतः हम इस बात के पक्ष में नहीं हैं कि विवाह विच्छेद के आधार के रूप में अपरिहार्य विच्छिन्नता को अपनाने के आवश्यक परिणामस्वरूप विवाह विच्छेद के वर्तमान आधारों को लुप्त कर दिया जाए।

यहां इस बात पर ध्यान देना उपयुक्त होगा कि एक उच्च न्यायालय की स्त्री न्यायाधीश ने अपने उत्तर[2] में विनिर्दिष्ट रूप से यह कहा है :

> "यह आधार यथा संशोधित हिन्दू विवाह अधिनियम के अधीन पहले से विनिर्दिष्ट आधारों के अतिरिक्त होना चाहिए।"[1]

---

[1] हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955, धारा 13 (1).

2 क्र० 34 प्रश्न 3 के प्रति 1955

अध्याय 6

अलग रहने की अपेक्षा

6.1. **अलग रहना**—अब हमें उस मानदण्ड पर विचार करना चाहिए जिसका प्रयोग न्यायालय विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता का अनुमान लगाने में करेंगे। यह मानदण्ड तथ्यात्मक और मूर्त होने चाहिए न कि अमूर्त या केवल मष्तिष्क के विचारों से संबंधित।

तदनुसार अधिकतर देशों में प्रायः यह वांछनीय समझा जाता है न्यायालय का इस बाबत कुछ मार्गदर्शन किया जाए कि अपरिहार्य विच्छिन्नता को किस प्रकार सांक्षिप्त किया जाएगा। इस प्रयोजन के लिए, विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के आधार पर विवाह विच्छेद अनुज्ञात करने वाला विधायी उपबन्ध प्रायः अन्य बातों के साथ साथ इस शर्त के अधीन रखा जाता है कि इस बात का सबूत होना चाहिए कि पक्षकार एक विनिर्दिष्ट अवधि से अलग अलग रह रहे हैं।

6.2. **प्रश्न 2 और 3**—मामले के इस पहलू का ध्यान रखते हुए हमारी प्रश्नसूची ने इस बाबत विचार आमंत्रित किए ऐसी कौन सी परिस्थितियां हैं जो विच्छिन्नता का पर्याप्त सबूत होंगी।

प्रश्न इस प्रकार था :[1]

> "प्रश्न 2. यदि प्रश्न 1 का उत्तर सकारात्मक हो तो आपकी राय में ऐसी कौन सी परिस्थितियां हैं जिनको विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता साबित करने के लिए पर्याप्त समझना चाहिए ?"

विच्छिन्नता साबित करने वाली अलग रहने की अवधि के बारे में हमारी प्रश्न सूची का प्रश्न 3 इस प्रकार था :[2]

> "प्रश्न 3. पक्षकारों को कितने समय तक अलग रहा होना चाहिए जिससे न्यायालय यह निष्कर्ष निकाल सके कि विवाह अपरिहार्य रूप से विच्छिन्न हो गया है ?"

6.3. **प्रश्न 2 के उत्तर की खास बातें**—प्रश्न 2 के उत्तरों में दी गई कुछ खास बातें नीचे दी गई हैं। प्रश्न 3 के उत्तरों के बारे में बाद[3] में विचार किया जाएगा।

कुछ बातें इस प्रकार हैं :—

> "दो विवाहित व्यक्तियों की सहमति प्रप्याप्ति होनी चाहिए।"[4]
> "सहवास न करना" विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता का पर्याप्त सबूत होना चाहिए"[5]

---

[1] प्रश्न 2।

[2] प्रश्न 3।

[3] पैरा 6.7 आगे।

[4] क्रम सं० 1

[5] क्रम सं० 2।

"पति और पत्नी का पांच वर्ष से अधिक के लिए अलग रहना" विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता साबित करने के लिए पर्याप्त होना चाहिए[1]।

"भरी जवानी में पति और पत्नी का लगातार अलग रहना, और एक के मन में पास न आने की इच्छा विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता साबित करने के लिए पर्याप्त है।"[2]

झगड़े के कारण लगातार अलग रहने के बाद और एक वर्ष की अवधि के अन्दर किसी पक्षकार द्वारा दाम्पत्याधिकार के लिए अर्जी न दिए जाने पर, अलग रहने को विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता का सहायक आधार समझना चाहिए।

या

एक वर्ष से अधिक के लिए लगातार अलग रहना

जिसके साथ दोनों पक्षकारों में से किसी की ओर से दुराचरण का संदेह, प्रवेश से पैदा होने वाला[3] मानसिक या दैहिक क्रूरता दोनों में से किसी पक्षकार के विवाह पूर्व के अवैध सम्बन्ध वाले जारकर्म का पता लगाना जिससे कि उनका साथ साथ रहना असम्भव हो जाए।"

"लम्बी अवधि के लिए पक्षकारों का लगातार अलग अलग रहना" अपरिहार्य विच्छिन्नता का पर्याप्त सबूत होना चाहिए।[3]

कुछ अन्यों के अनुसार अपरिहार्य विच्छिन्नता साबित करने के लिए पर्याप्त परिस्थितियां निम्नलिखित हैं[5]

(क) यह सबूत कि "पति और पत्नी आन्तरिक झगड़ों के कारण कम से कम एक वर्ष से अलग रह रहे हैं और दाम्पत्याधिकारों की पूर्ति करने की उनकी मर्जी नहीं है...।";

(ख) यदि न्यायिक पृथककरण या विवाह-विच्छेद अथवा दाम्पत्याधिकारों के प्रत्यास्थापक का कोई मामला तीन वर्ष से लम्बित है, और झगड़े को तय करने या समझौता करने का कोई प्रयत्न दोनों में से किसी पक्षकार द्वारा नहीं किया जाता है।"

(ग) कुछ मामलों में पति या पत्नी का केवल इतना सादा निवेदन विचाराधीन करना पर्याप्त है कि वह साथ साथ नहीं रह सकते...।

---

1 क्रम सं० 5

2 क्रम सं० 6

3 क्रम सं० 7

4 क्रम सं० 10या।

5 क्रम सं० 1 और 13।

कुछ उत्तरों में दी गई परिस्थितियां निम्नलिखित हैं :—

"(हिन्दू विवाह अधिनियम में) विवाह विच्छेद के वर्तमान आधार विवाह की पृथक्करण विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता को साबित करने के लिए पर्याप्त समझा जाना चाहिए ।"[1]

"पति और पत्नी का किन्हीं भी कारणों से पर्याप्त रूप से युक्तियुक्त समय के लिए पृथक्करण विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता को साबित करने के लिए पर्याप्त समझा जाना चाहिए"[2] ।

विच्छिन्नता को साबित करने के लिए पर्याप्त परिस्थितियां "कुछ इस प्रकार की" होनी चाहिए जो नीचे दी गई हैं किन्तु "किसी भी हालत में उन्हें परिपूर्ण नहीं कहा जा सकता"[3] ।

"(क) जब जीवन के किसी महत्वपूर्ण पहलू पर पति और पत्नी के विचार इतने भिन्न हैं कि उनके बीच पुनर्मिलाप और सहयोग की कोई सम्भावना नहीं है ;

(ख) दोनों पक्षकारों के पति पत्नी के हैसियत में एक दूसरे के लिए कामोत्तेजना का आभाव ;

"(ग) पति या पत्नी में से किसी में कामवासना के प्रति अरुचि और एक दूसरे के प्रति आकर्षण का अभाव ;

"(घ) पति और पत्नी दोनों के बीच भावनात्मक विघटन" ।

न्यायालय का समाधान हो जाना चाहिए कि दूसरा पक्षकार "कम से कम तीन वर्ष की लगातार अवधि तक सहवास के बिना अर्जी से अलग रहा है या रही है"[3] ।

"(प्रश्न 1 में)[4] दिया गया सुझाव केवल तभी स्वीकार किया जा सकता है जब कि विधि ऐसे नये तथ्यों के लिए भी उपबंध करे जिनसे विच्छिन्नता होगी ।"[3]

एक और उत्तर[5] के अनुसार "विवाह की विच्छिन्नता न्यायालय द्वारा अपना यह समापन करने के पश्चात विनिश्चित करने की तथ्य की बात है कि पुनर्मिलाप के सभी सम्भव उपायों से काम लिया जा चुका है और वे असफल हुए हैं ।"

6.4. **प्रश्न 2 अलग रहना विच्छिन्नता का सकल होना—के बारे में सिफारिश—** मामले पर गम्भीरता पूर्वक विचार करने के पश्चात् हम यह विचार प्रकट करना चाहेंगे कि अपरिहार्य विच्छिन्नता इस बात से मानली जा सकती है कि पति और पत्नी लगातार लम्बी अवधि से अलग रह रहे हैं । यह अवधि कितनी लम्बी होनी चाहिए इस पर बाद में[6] विचार किया जाएगा ।

---

[1] क्रम सं० 15
[2] क्रम सं० 17
[3] क्रम सं० 19

1 प्रश्न 1 इस प्रकार था:
"क्या आपइस सुझाव सेयसहमत हैं कि विवाह विच्छेद की डिक्री देने के लि विवह की अपरिहार्य विच्छिन्नता को एक अच्छे आधार के रूप में समाविष्ट करने की दृष्टि से हिन्दू विवहा अधिनियम में संशोधन किया जाए ?"

[4] क्रम सं० 19 क
[5] आगे देखिए ।

6.5. हम यह भी कहना चाहेंगे कि विनिर्दिष्ट अवधि तक अलग रहने को ही अपरिहार्य विच्छिन्नता का सबूत मानना चाहिए । इस प्रश्न का निष्कर्ष निकालने में अनेक बातों का ध्यान रखना होता है ।

हमारी राय में किसी पक्षकार के लिए यह कहना पर्याप्त नहीं है कि विवाह का अपरिहार्य विच्छेद हुआ है । ऐसा कथन सिद्ध किया जाना चाहिए । इस कथन को सिद्ध करने के लिए इससे अच्छा क्या तथ्य हो सकता है कि पति और पत्नी वैवाहिक सम्बन्ध होते हुए भी लम्बी अवधि से अलग अलग रह रहे हैं । यह बात कि विवाह के पक्षकार अनेक वर्षों से साथ साथ नहीं रह रहे हैं युक्तियुक्त रूप से विवाह की विच्छिन्नता का मूर्त सबूत मानी जा सकती है ।

इसके अलावा विवाह का सार सामान्य जीवन में सहयोग, जीवन से होने वाले सुख और दुख में हिस्सा बटाना और तन और मन के संयुक्त उपभोग से प्राप्त आनन्द का अनुभव तथा अपनी संतान पर स्नेह और प्यार निछावर करना है । साथ साथ रहना सभी पहलुओं में ऐसे हिस्सा बटाने के संकेत का प्रतीक है । उससे ऐसे सार के छिन्न भिन्न होने की बात "विच्छिन्नता"—प्रतिदर्शित होती है और यदि वह काफी लम्बी अवधि तक जारी रहा तो उससे यह संकेत मिलता है कि विवाह सारतः समाप्त—"अपरिहार्यतः विच्छिन्न"—हो गया है ।

6.6. **अवधि का अत्याधिक लम्बी या अत्यधिक छोटी न होना—प्रश्न 3** का सम्बन्ध अलग रहने[1] की अवधि से है । इस मामले में केवल यही बात ध्यान में रखने योग्य है कि अवधि इतनी लम्बी नहीं होनी चाहिए कि वह असहनीय हो जाए और राहत अप्राप्त हो जाए और न वह इतनी कम ही होनी चाहिए कि भूत काल में विवाह के अस्थायी रूप से असफल होते हुए भी भविष्य में उसको कार्यान्वित करने की सम्भावना पर विचार किए बिना जल्दबाजी में विवाह विच्छेद कराना चाहने को प्रोत्साहन मिले । ऐसी अस्थायी असफलता और उस बन्धन के, जिससे दोनों पक्षकारों को बंधे रखने की आशा की जा सकती है, कमजोर पड़ जाने पर भी हो सकता है कि विवाह को बचाने की आशा है । विवाह सारतः छिन्न भिन्न हो गया हो किन्तु वह समाप्त न हुआ हो । छिन्न भिन्न होने और समाप्त होने के बीच की रेखा बहुत बारीक हो सकती है किन्तु फिर भी वह ऐसी है कि कोई भी विचारवान विधायक उसकी अवहेलना करने के लिए तैयार नहीं होना चाहिए । ऐसे तर्कों के आधार पर हमारी यह राय है कि विच्छिन्नता के अपरिहार्य कहे जाने से पूर्व तीन वर्ष की अवधि तक अलग रहने की अपेक्षा होनी चाहिए ।

6.7. **प्रश्न 3 के उत्तर**—हम यह बता देना चाहेंगे कि हमारी प्रश्न सूची के प्रश्न 3 के जो उत्तर प्राप्त हुए उनमें छह मास से लेकर 10 वर्ष तक की अवधियों का सुझाव दिया गया है । छह मास की अवधि का सुझाव एक महिला अधिवक्ता[2] ने दिया है जब कि दस वर्ष की अवधि का सुझाव उच्च न्यायालय के एक सेवानिवृत न्यायाधीश[3] द्वारा दिया गया है ।

---

[1] पीछे पैरा 6.2 देखिए ।

[2] क्रम सं0 19

[3] [illegible]

इनके (छह मास और दस वर्ष) चरम सीमाओं के बीच बहुत बड़ा मार्जिन है । इस प्रकार प्रश्न सूची के अनेक उत्तर एक वर्ष[1] की अवधि के पक्ष में हैं । किन्तु एक उत्तर में[2] कहा गया है कि विवाह कम से कम तीन वर्ष तक अस्तित्वशील होना चाहिए ।

एक उच्च में[3] दो वर्ष की अवधि का सुझाव दिया गया है ।

एक उच्च न्यायालय के न्यायाधीश ने[4] तीन वर्ष की अवधि का सुझाव दिया है ।

एक राज्य सरकार का सुझाव चार वर्ष की अवधि का है ।[5]

एक महिला वकील ने तीन या पांच वर्ष का सुझाव दिया है ।

एक महिला वकील ने तीन या पांच वर्ष का सुझाव दिया है ।[6]
एक उच्च न्यायालय के न्यायाधीश[7] सहित अनेकों के उत्तरों में[8] पांच वर्ष की अवधि

एक उत्तर में सात वर्ष की अवधि का सुझाव दिया गया है ।[9]

6.3. **तीन वर्ष तक लगातार अलग रहने के बारे में सिफारिश**—मामले पर ध्यान पूर्वक विचार करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि तीन वर्ष तक लगातार अलग रहने की अवधि न्यायसम्मत और उचित होगी । हमने देखा है कि इंगलैंड की विधि में यह अवधि पांच वर्ष है[10] । पर इस संबंध में यह बताना उपयुक्त होगा कि भारत में विवाह विषयक कार्यवाहियों के निपटारे में काफी समय लगता है । डिक्री दिए जाने के समय तक अधिकतर मामलों में लगातार अलग रहने की अवधि वस्तुतः पांच वर्ष से भी अधिक हो जाएगी । इसलिए हमारा यह विचार है कि अर्जी देने से ठीक पूर्व लगातार अलग रहने की तीन वर्ष की अवधि पर्याप्त होगी । जहां एक ओर इससे पुनर्विचार के लिए काफी समय मिल जाएगा और यह विवाह की स्थिरता से असंगत न होगी, वहां दूसरी ओर यह अनैतिकता संप्रवर्तित करने या और कड़वाहट पैदा करने के लिए असहनीय रूप से लम्बी नहीं होगी ।

6.9. लगातार अवधि की गणना—यहां हम यह बताना चाहेंगे कि इंगलैंड कोड्एक्ट[11] के अधीन उस अवधि की जिसके दौरान पति और पत्नी अलग रहे हैं लम्बाई पर विचार करने में, कुल मिलाकर छह मास से अधिक न होने वाली उन किन्हीं एक या अधिक अवधियों को हिसाब में नहीं लिया जाता जिनके दौरान पक्षकार फिर से एक दूसरे के साथ रहने लगे । इस प्रकार फिर से एक साथ रहने का प्रयोजन यहां पता करना है कि

1 क्रम सं० 17, 11, 13 और 19क

2 क्रम सं० 19 क

3 क्रम सं० 15

4 क्रम सं० 25

5 क्रम सं० 31

6 क्रम सं० 19

7 क्रम सं० 34

8 क्रम सं० 5, 6, 10 और 19 (3 या 5 वर्ष))

9 क्रम सं० 2

10 मैट्रिमोनियल काजेज एक्ट 1973 धारा 1 (2) (ई) ।

11 मैट्रिमोनियल काजेज एक्ट, 1973 धारा 2 (5) ।

क्या विवाह में अनबन हो जाने के कारण लम्बे समय तक अलग रहने के बावजूद पक्षकारों में पुनर्मिलाप हो सकता है ? हम इस प्रकार फिर से एक साथ रहना निरुत्साहित नहीं करना चाहते। इस प्रकार एक दूसरे के साथ रहना कभी कभी परिवार में किसी की मृत्यु या किसी बच्चे की बीमारी के कारण आवश्यक हो सकता है। किन्तु यदि विधि की यह अपेक्षा हो कि अलग रहने की अवधि की गणना फिर से एकसाथ रहने से नए सिरे से की जानी होगी तो पति और पत्नी फिर से एक साथ रहने के विरुद्ध होंगे इसलिए हम इस प्रकार अस्थायी रूप से एक दूसरे के साथ फिर से रहने को हिसाब में नहीं लेंगे। हमारी राय में ऐसे एक दूसरे के साथ फिर से रहने की कुछ अवधि तीन मास की होनी चाहिए। हम इंग्लैंड की विधि में अल्लिखित छह मास की अवधि में एक दूसरे के साथ फिर से रहने की अवधि में यह कटौती इसलिए कर रहे हैं कि हमने इंगलैंड की विधि द्वारा विहित पांच वर्ष की अवधि में भी तत्समान कटौती की है[1]

---

1 पीछे पैरा 6.8 देखिए।

अध्याय 7

सुरक्षण

7.1. प्रस्तावना—अधिकतर देशों में विवाह विच्छिन्नता के आधार पर विवाह-विच्छेद अनुज्ञात करने वाले विधान में कुछ सुरक्षणों का उपबन्ध किया गया है। ये सुरक्षण दो महत्वपूर्ण बातों को लेकर चलते हैं। पहला यह है कि कोई विवाह जो परिरक्षित किए जाने योग्य है परिरक्षित किया जाना चाहिए और दूसरा यह कि जहां विवाह का विघटन अपरिवर्जनीय हो जाता है वहां यह सुनिश्चित करने का ध्यान रखना चाहिए कि उन लोगों के हितों की रक्षा की जाती है जिनको विवाह विच्छेद के परिणामस्वरूप होने की सम्भावना है।

दूसरे देशों में विधान द्वारा प्रायः जो सुरक्षण उपबन्धित किए जाते हैं वे इस प्रकार हैं :—

बच्चों के कल्याण के लिए उपबंध।

प्रत्यर्थी को कष्ट की दशा में विवाह विच्छेद से इन्कार करने के लिए न्यायालय को अनुज्ञात करने का उपबन्ध।

विवाह के पश्चात् कुछ अवधि के अन्दर विवाह विच्छेद निर्बन्धित करने का उपबन्ध।

यह सुरक्षा उस संशोधन में अन्तर्निहित है जिसकी हमने सिफारिश की है[1]। क्योंकि विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के आधार पर विवाह विच्छेद के लिए अर्जी वस्तुतः विवाह की तारीख से 3 वर्ष से अधिक हो जाने पर ही फाइल की जा सकती है।

पुनर्मिलाप के लिए उपबन्ध।

इस प्रयोजन के लिए हिन्दू विवाह अधिनियम[2] में पहले से ही उपबंध विद्यमान है।

विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के मामलों पर विचार करते समय यह बताना उपयुक्त होगा कि वर्तमान विचारधारा यह है कि अनिवार्य सलाह से समय और साधन दोनों की बर्बादी सिद्ध होगी क्योंकि अधिकतर पति पत्नी में किसी भी दशा में पुनर्मिलाप नहीं होगा और साधनों का उपयोग ऐसे पक्षकारों पर केन्द्रित करना चाहिए जो अपने विवाह में वास्तविक दिलचस्पी प्रदर्शित करते हैं[3] यह सुझाव दिया गया है कि सलाह देना उस दशा में होगा जहां पति-पत्नी अपने विवाह के भविष्य में वास्तविक दिलचस्पी प्रदर्शित नहीं करते और स्वयम् सलाह लेना नहीं चाहते। किन्तु यह उल्लिखित

---

[1] पीछे पैरा 6.8 देखिए।

[2] हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955, धारा 23(2)।

[3] मैक्स रीनस्टीन "दि ला आफ डाइवोर्स एण्ड दी प्राबलम मैरेज स्टेबिलिटी" (1956) 9 वैण्डर बिल्ट ला रिव्यू 633, जिसका निदेश किया है फैंक सेट्स, "दि एनफोर्समैंट आफ मैरेज रीवजिटेड" (जुलाई–सितम्बर, 1977) जिल्द 6 नं० 3, एंग्लो अमरीकन ला रिव्यू, 172, 101।

[4] शील्डसन "सिस्टमैटिक मैरेज इनवैस्टिगेशन एण्ड काउन्सलिंग इन डाइवोर्स केसेज : सम रिफ्लैक्शंस आन इन कंस्टीट्यूशनल प्रोप्राइटी एण्ड जनरल डिजायरेबिलिटी" (1967) 36 जार्ज वाशिंगटन ला रिव्यू 50, 70 जिसका निर्देश किया है "दि एनफोर्समेंट आफ मैरेज रीविजिटेड" (जुलाई सितम्बर, 1977) जिल्द 6, नं० 3, एंग्लो अमरीकन ला रिव्यू, 172, 181।

करना उपयुक्त होगा कि अधिनियम की धारा 23(2) न्यायालय पर यह कर्तव्य अधिरोपित करती हैं कि वह पक्षकारों के बीच पुनर्मिलाप कराने का पूर्ण प्रयास करे "जहां कि मामले की प्रकृति और परिस्थितियों से संगत रहते हुए ऐसा करना सम्भव हो" ।

जहां अधिनियम की धारा 23(2) के निबन्धनों के अधीन पुनर्मिलाप सम्भव हैं वहां कभी कभी यह वांछनीय होगा कि पुनर्मिलाप कराने के लिए अर्हित व्यक्तियों की ही नहीं बल्कि परिवार के सदस्यों की सेवाओं का भी उपयोग किए जाए । इस प्रसंग में सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 32-क का उल्लेख कर सकते हैं जो 1976 में अन्तःस्थापित किया गया था[1] । यह आदेश परिवार से संबद्ध मामलों के बारे में वादों में और कार्यवाहियों पर लागू होता हैं । आदेश का नियम 3 ऐसे वादों और कार्यवाहियों में समझौते का प्रयत्न करने का कर्तव्य अधिरोपित करता हैं ।

आदेश का नियम 4 इस प्रकार हैं :—

कल्याण विशेषज्ञ की सहायता—"ऐसे प्रत्येक वाद या कार्यवाही में जिसे यह आदेश लागू होता हैं, न्यायालय को इस आदेश के नियम 3 द्वारा अधिरोपित कृत्यों के निर्वहन में न्यायालय की सहायता के प्रयोजन के लिए ऐसे व्यक्ति की सेवाएं (विशेषकर महिला की सेवा, यदि उपलब्ध हो) चाहे वह पक्षकारों का नातेदार हो या न हो, इसके अन्तर्गत कुटम्ब के कल्याण की प्रोन्निति में वृतिक तौर पर लगा हुआ व्यक्ति भी हैं जिसे न्यायालय ठीक समझे, प्राप्त करने की स्वतन्त्रता होगी ।"

विवाह विषयक न्यायालय जब कभी उपयुक्त हो इस नियम का आश्रय ले सकते हैं । प्रत्यर्थी की वित्तीय स्थिति से होने वाले निर्बन्धन ।

बाल कल्याण

7.2. **बाल कल्याण**—बच्चों पर विवाह विच्छेद के प्रतिकूल प्रभाव के बारे में चिन्ता प्रकट की जाती हैं । यह विचार प्रकट किया गया हैं कि जहां कुछ मामलों में मां-बाप के बीच निरन्तर झगड़े से होने वाला मानसिक तनाव विवाह विच्छेद से कम हो जाता हैं फिर भी विवाह-विच्छेदों में वृद्धि का यह अर्थ हैं कि हम "   " मां-बापों वाले एक नए समाज की रचना कर रहे हैं और ऐसी स्थिति में नुकसान बच्चों को हो सकता हैं । व्यसक जो विवाह-विच्छेद और पुनर्विवाह करते हैं जानबूझकर सुख प्राप्त करने का नया मार्ग ढूंढ रहे हैं किन्तु बच्चे अपनी मर्जी के बिना इस मार्ग में घसीटे जा रहे हैं ।[2]

7.3. **बच्चों के बारे में अंग्रेजी अधिनियम में उपबन्ध**—इस संदर्भ में इंगलैंड के अधिनियम में विवाह विच्छेद[3] की डिक्री के आत्यंतिक किए जाने पर एक महत्वपूर्ण निर्बन्धन लगाया गया हैं । उस अधिनियम की धारा 41 नीचे दी जाती हैं :—

"41. (1) न्यायालय विवाह विच्छेद की या विवाह की अकृतता की डिक्री को तब तक आत्यंतिक नहीं करेगा या न्यायिक पृथककरण की डिक्री नहीं देगा जब तक न्यायालय ने आदेश द्वारा यह घोषित न कर दिया हो कि उसका समाधान हो गया हैं—

(क) कि इस धारा के प्रयोजनों के लिए परिवार में कोई ऐसे बच्चे नहीं हैं जिनको यह धारा लागू होती हैं, या

---

[1] आदेश 32क, नियम 3-4 सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 ।

[2] चाइल्ड गाइडैन्स क्लिनिक के डाइरेक्टर सैल्वेडोर मिन्यूशिन से बातचीत जैसी कि वह यू0 एस0 न्यूज आफ दि वर्ल्ड रिपोर्ट (13 जनवरी 1975) पृष्ठ 44, 46 में उद्धृत की गई है ।

[3] मैट्रिमोनियल कालेज एक्ट, 1973, धारा 41-।

(ख) कि ऐसे बच्चे जो परिवार के हैं या हो सकते हैं जिनको यह धारा लागू होती है केवल वे बच्चे हैं जिनके नाम आदेश में दिए गए हैं और कि—

इस प्रकार नामित प्रत्येक बच्चे के कल्याण के लिए इन्तजाम किए जा चुके हैं और संतोषजनक हैं या इतने अच्छे हैं जितने कि परिस्थितियों में किए जा सकते हैं ; या

न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने वाले पक्षकार या पक्षकारों के लिए ऐसे कोई इन्तजाम करना अव्यावहारिक है ; या

(ग) कि ऐसे परिस्थितियां हैं जिनसे यह वांछनीय है कि इस बात के होते हुए भी कि परिवार में ऐसे बच्चे हैं या हो सकते हैं जिनको यह धारा लागू होती है और न्यायालय ऊपर के पैरा (ख) के अनुसार घोषणा करने में असमर्थ है, डिक्री अविलम्ब यथास्थिति दी जानी चाहिए या आत्यांतिक बनाई जानी चाहिए ।

(2) न्यायालय यह घोषणा करने वाला आदेश कि ऊपर की उपधारा (1)(ग) में उल्लिखित प्रकार से उसका समाधान हो गया है तब तक नहीं करेगा जब तक उसे दोनों या दोनों में से किसी पक्षकार से ऐसा समाधानप्रद वचनबन्ध पत्र प्राप्त नहीं हो जाता कि वह आदेश में नामित बच्चों के लिए इन्तजाम के प्रश्न को एक विनिर्दिष्ट समय के अन्दर न्यायालय के समक्ष लाएंगे ।

(3) यदि न्यायालय ऊपर की उपधारा (1) के अधीन आदेश किए बिना विवाह विच्छेद की अविवाह की अकृतता की डिक्री को आत्यान्तिक बना देता है या न्यायिक पृथककरण की डिक्री दे देता है तो वह डिक्री शून्य होगी किन्तु यदि ऐसा आदेश किया गया था तो किसी भी व्यक्ति को डिक्री की विधिमान्यता के बारे में इस आधार पर आपत्ति करने का हक नहीं होगा कि ऊपर की उपधारा (1) या (2) द्वारा विहित शर्तों की पूर्ति नहीं की गई थी ।

(4) यदि न्यायालय विवाह विच्छेद, विवाह की अकृतता या न्यायिक पृथककरण की किसी कार्यवाही में ऊपर की उपधारा (1) के अधीन आदेश करने से इन्कार करता है तो वह कार्यवाहियों में के दोनों में से किसी पक्षकार के आवेदन पर यह घोषित करने वाला आदेश करेगा कि उस उपधारा में उल्लिखित रूप से उसका समाधान नहीं हुआ है ।

(5) यह धारा परिवार के निम्नलिखित बच्चों को लागू होती, अर्थात्—

(क) परिवार कोई अवयस्क बच्चा जो ऊपर की उपधारा (1) के अधीन आदेश की तारीख को

सोलह वर्ष से कम आयु का है, या

किसी शैक्षिक स्थापन में शिक्षण प्राप्त कर रहा है या व्यापार, वृत्ति अथवा व्यवसाय के लिए प्रशिक्षाधीन है चाहे वह अभिलाभपूर्ण नियोजन में भी है या नहीं है, और

(ख) परिवार का कोई अन्य बच्चा जिसके बारे में न्यायालय उस उपधारा के अधीन आदेश द्वारा निदिष्ट करता है कि यह धारा उसे लागू होगी ;

और न्यायालय ऐसा निदेश उस दशा में दे सकेगा जब उसकी यह राय है कि ऐसी विशेष परिस्थितियां हैं जिनसे बच्चे के हित में यह वांछनीय है कि यह धारा उसको लागू होनी चाहिए ।

(6) इस धारा में बच्चे के सम्बन्ध में "कल्याण" के अन्तर्गत बच्चे को अभिरक्षा और शिक्षा तथा उसके लिए वित्तीय उपबन्ध भी हैं।"

7.4. **हिन्दू विवाह अधिनियम में उपबन्ध**—हिन्दू विवाह अधिनियम में विवाह विच्छेद मंजूर[1] करने पर बच्चों के हित में निर्बन्धन के बारे में एक सीमित उपबन्ध है। धारा 14(1) के अधीन न्यायालय उन नियमों के अनुसार किए गए आवेदन पर जो उच्च न्यायालय द्वारा इस निमित्त बनाएं जाएं किसी अर्जी का विवाह की तारीख से तीन वर्ष बीतने के पूर्व भी इस आधार पर उपस्थापित किया जाना अनुज्ञात कर सकेगा कि मामला अर्जीदार के लिए असाधारण कष्ट का है या प्रत्यर्थी की असाधारण दुराचारिता से युक्त है।

धारा 14(2) में यह उपबन्ध है—

> "विवाह की तारीख से तीन वर्ष के अवसान के पूर्व विवाह-विच्छेद की अर्जी उपस्थापित करने की इजाजत के लिए इस धारा के अधीन किए गए किसी आवेदन का निपटारा करने में न्यायालय उस विवाह से उत्पन्न किसी अपत्य के हितों पर तथा इस बात का ध्यान रखेगा कि पक्षकारों के बीच उक्त तीन वर्ष के अवसान से पूर्व पुनर्मिलाप की कोई युक्तियुक्त सम्भाव्यता है या नहीं।"

7.5. **प्रश्न सूची का प्रश्न** 4 और **उसके उत्तर**—जहां तक बच्चों के होने का प्रश्न है हमारी प्रश्न सूची का प्रश्न 4 निम्नलिखित था[2] :—

> "**प्रश्न** 4—क्या बच्चों के होने से विवाह को अपरिहार्य विच्छिन्नता के आधार पर विवाह विच्छेद की डिक्री देना वर्जित होना चाहिए ? यदि हां, तो क्या वर्जन पूर्ण होना चाहिए या आंशिक ?"

यहां यह बताना उपयुक्त होगा कि इस प्रश्न के जो उत्तर प्राप्त हुए उनमें अधिकतर ने बच्चों के होने के पूर्ण वर्जन मानना आवश्यक नहीं समझा। किन्तु एक उत्तर में इस बात को उस दशा में आंशिक वर्जन समझा गया है जब कि बच्चा या बच्चे इस वर्ष से कम आयु के हों और पति पत्नी दोनों को उनका विशेष स्नेह हो।[3]

7.6. **बच्चों के बारे में सिफारिश**—हम यह नहीं समझते कि बच्चों के होने से विवाह विच्छेद की डिक्री देना पूर्णतः वर्जित होना चाहिए। किन्तु हमारी यह राय है कि जहां विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के आधार पर विवाह-विच्छेद चाहा जाए वहां न्यायालय को बच्चों के हितों का ध्यान रखना चाहिए। जहां बच्चों के भरणपोषण, सहारे और शिक्षा के लिए वित्तीय उपबन्ध करना आवश्यक हो वहां अधिनियम में इसके लिए उपबन्ध विद्यमान है। बच्चों का होना ऐसी बात है जिससे हुए उपबन्धों के अधीन समुचित आदेश करने को बल मिलता है।

तदनुसार हम यह सिफारिश[4] करते हैं कि इस बारे में एक उपबंध अन्तःस्थापित किया जाए।

विवाह से हुए बच्चों के बारे में उपबन्ध का मुख्य उद्देश्य इस प्रक्रम पर वर्णित किया जा सकता है।

---

[1] हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955, धारा 14।

[2] प्रश्न 4।

[3] क्रम सं० 19

[4] आगे अध्याय 8 देखिए।

न्यायालय अपरिहार्य विच्छिन्नता के बारे में नए उपबंध के अधीन विवाह विच्छेद की डिक्री केवल तभी पारित करेगा जब उसका समाधान हो जाता है कि उस विवाह से हुए निम्नलिखित बच्चों के भरणपोषण के लिए विवाह के पक्षकारों का वित्तीय हैसियत से संगत पर्याप्त उपबन्ध कर दिए गए हैं।

यह उपबन्ध निम्नलिखित को लागू होगा--

(क) अवयस्क बच्चे ;

(ख) अविवाहित या विधवा पुत्रियां जिनके पास अपना भरण-पोषण करने के लिए वित्तीय साधन न हों ; और

(ग) ऐसे बच्चे जिनके भौतिक या मानसिक स्वास्थय की विशेष परिस्थिति के कारण उनकी देखभाल करना आवश्यक है और जिनके पास अपना भरण पोषण करने के लिए वित्तीय साधन न हों।

कष्ट

7.7. **कष्ट**—उपर्युक्त के अलावा ऐसे कष्ट का प्रश्न है जो विवाहविच्छेद मंजूर किए जाने के कारण प्रत्यर्थी को हो। इंग्लैण्ड का अधिनियम[1] पांच वर्ष के पृथक्करण का विच्छिन्नता होने के आधार पर विवाह विच्छेद के लिए अर्जी के प्रत्यर्थी को इस बात के लिए समर्थ बनाता है कि वह अर्जी का इस आधार पर विरोध करे कि "विवाह के विघटन से उसे गम्भीर वित्तीय या अन्य कष्ट होगा और उन सभी परिस्थितियों में विवाह को विघटित करना गलत होगा।" सारी धारा का मूल पाठ निम्नलिखित है :

"पांच वर्ष के पृथक्करण के मामलों में प्रत्यर्थी को गम्भीर कष्ट के आधारों पर डिक्री से इन्कार

5.(1) विवाह विच्छेद के लिए अर्जी में अर्जीदार पांच वर्ष के पृथक्करण का अभिकथन करता है उसका प्रत्यर्थी डिक्री दिए जाने का विरोध इस आधार पर कर सकता है कि विवाह के विघटन से उसे गम्भीर वित्तीय या अन्य कष्ट होगा और उन सभी परिस्थितियों में विवाह को विघटित करना गलत होगा।

(2) जहां डिक्री दिए जाने का विरोध इस धारा के बल पर किया जाता है, वहां—

(क) यदि न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि अर्जीदार अपनी अर्जी के समर्थन में पांच वर्ष के पृथक्करण के तथ्य का अवलम्ब लेने का हकदार है और ऊपर की धारा 1(2) में उल्लिखित किसी अन्य तथ्य के बारे में ऐसा निष्कर्ष नहीं निकालता है, और

(ख) चाहे इस धारा से अलग न्यायालय अर्जी पर डिक्री मंजूर कर देता, तो न्यायालय विवाह के पक्षकारों के आचरण और उन पक्षकारों के तथा किन्हीं बच्चों या अन्य सम्बद्ध व्यक्तियों के हितों सहित सब परिस्थितियों का ध्यान रखेगा और यदि उसकी यह राय है कि विवाह के विघटन से प्रत्यर्थी को गम्भीर वित्तीय या अन्य कष्ट होगा और सभी परिस्थितियों में विवाह को विघटित करना गलत होगा तो वह अर्जी को खारिज कर देगा।

1. मैट्रिमोनियल काजेज एक्ट, 1973, धारा 5

(3) इस धारा के प्रयोजनों के लिए कष्ट के अन्तर्गत कोई ऐसा फायदा प्राप्त करने के अवसर की हानि भी है जिसे प्रत्यर्थी विवाह के विघटित न किए जाने पर प्राप्त करता ।"

7.8. **'कष्ट' के बारे में निर्णयज विधि**—अतः इस प्रतिरक्षा के लिए दो सुभिन्न बातों का सबूत आवश्यक होता है। पहली यह कि विवाह के विघटित किए जाने पर प्रत्यर्थी को गम्भीर वित्तीय या अन्य गम्भीर कष्ट तथा ऐसे अन्य मामले जिनसे सभी परिस्थितियों में विवाह को विघटित करना गलत होगा। इन दोनों बातों पर विचार करने में न्यायालय को स्पष्ट निदेश है कि वह "विवाह के पक्षकारों के आचरण और उन पक्षकारों के तथा किन्हीं बच्चों या अन्य सम्बद्ध व्यक्तियों के हितों सहित सब परिस्थितियों पर विचार करे।"

7.9. **प्रश्न** 5—अपनी प्रश्न सूची के प्रश्न 5 द्वारा हमने इस प्रश्न पर विचार जानने चाहे कि क्या विशेष परिस्थितियों के आधार पर डिक्री से इन्कार किया जाना चाहिए।[1]

"**प्रश्न** 5—क्या आपकी राय में कोई ऐसी विशेष परिस्थितियां भी हैं जिनमें विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के सिद्ध हो जाने पर भी विवाह विच्छेद की डिक्री मंजूर नहीं की जानी चाहिए ? यदि हां, तो कृपया उन परिस्थितियों को विनिर्दिष्ट कीजिए।"

यहां हम यह बताना चाहते हैं कि जब कि इस प्रश्न के अनेक उत्तर नकारात्मक हैं एक उत्तर में[2] यह सुझाव दिया गया है कि यदि यह समझा जाता है कि प्रस्थापित आधार को समाविष्ट करने से महिलाओं को कष्ट होगा या उन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा तो प्रस्थापित आधार पर विवाह विच्छेद चाहने का अधिकार पत्नी को ही होना चाहिए।

एक उच्च न्यायालय की एक महिला न्यायाधीश का उत्तर अधिक स्पष्ट है। उन्होंने कहा है[3] :—

> "जब विवाह के पक्षकार अर्जी दिए जाने से ठीक पूर्व कमसे कम पांच वर्ष की लगातार अवधि तक अलग रहे हों तब इसे इस बात का प्रथम दृष्टया सबूत समझना चाहिए कि विवाह अपरिहार्य रूप से विच्छिन्न हो गया है। विवाह के अपरिहार्य रूप से विच्छिन्न हो जाने के आधार पर विवाह विच्छेद की डिक्री किसी भी दशा में तब तक पारित नहीं की जानी चाहिए जब तक विवाह के पक्षकार अर्जी दिए जाने के ठीक पूर्व कम से कम पांच वर्ष की लगातार अवधि तक अलग न रहे हों। न्यायालय का प्रत्येक ऐसे मामले में यह भी समाधान हो जाना चाहिए कि विवाह के विघटन से प्रत्यर्थी को गम्भीर वित्तीय या अन्य कष्ट नहीं होगा। यदि प्रत्यर्थी पत्नी हो तो ऐसे विवाह-विच्छेद की मंजूरी की एक पूर्ववर्ती शर्त पत्नी को निर्वाह व्यय की उपयुक्त एक मुश्त राशि देना होनी चाहिए। रकम न्यायालय द्वारा अवधारित की जानी चाहिए। अनुकल्पतः न्यायालय पत्नी के लिए भरण पोषण के रूप में उस दशा में कोई मासिक रकम मंजूर कर सकता है जब न्यायालय का समाधान हो जाता है कि ऐसे भावी मासिक संदाय पर्याप्त रूप से सुनिश्चित हैं।
>
> दोनों में से कोई भी पक्षकार ऐसी अर्जी देने के लिए समर्थ होना चाहिए और ऐसी अर्जी देने के लिए दूसरे पक्षकार की सम्मति आवश्यक नहीं होनी चाहिए।"

---

1 प्रश्न 5

2 क्रम सं० 19

3 क्रम सं० 34 (प्रश्न 2 के अधीन)

7.10. **पत्नी के कष्ट के लिए सौकर्म**—हमारा यह मत है कि न्यायालय को यह विवेक देने के पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है कि वह विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के आधार पर विवाह विच्छेद से उस दशा में इन्कार कर सके जब कि विवाह विच्छेद से प्रत्यर्थी को गम्भीर वित्तीय कष्ट होगा और सभी परिस्थितियों में विवाह को विघटित करना गलत होगा। पहली दृष्टि में ऐसा प्रतीत हो सकता है कि जब एक बार यह सिद्ध हो जाए कि विवाह अपरिहार्य रूप से विच्छिन्न हो गया है तो किसी पक्षकार को कष्ट के आधार पर विवाह विच्छेद का विरोध करने देना तर्कहीन होगा। किन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि किसी कानूनी आधार पर विवाह विच्छेद या चाहे किसी भी अन्य वैवाहिक राहत की मंजूरी देना उस कानूनी आधार के घटक तथ्यों के सबूत पर अनिवार्यतः आज्ञापक नहीं है। सैद्धान्तिक रूप से न्यायालय को यह विवेक प्रदान करना गलत नहीं होगा कि वह राहत से उस दशा में इन्कार कर दे जब मामले की विशेष परिस्थितियों से अपेक्षित हो कि राहत देने से इन्कार कर दिया जाना चाहिए। ऐसा केवल आपवादिक परिस्थितियों में किया जाएगा किन्तु कानूनी विवेक प्रदान करने का आशय न्याय के हित का संवर्धन है और इसी लिए इस कारण समर्थन करने के योग्य है।

इसके साथ ही हम न्यायालय को प्रत्येक मामले में ऐसा विवेक प्रदान करना—जैसा कि इंगलैण्ड[1] में है, न्यायसंगत नहीं समझते। हम यह नहीं समझते कि ऐसा विवेक प्रदान करना उस दशा में आवश्यक है जब कि अर्जी पत्नी द्वारा दी जाती है। भारतीय परिस्थितियों में इस बात में कि कार्यवाहियां किसी स्त्री ने प्रारम्भ की हैं, अधिकतर मामलों में यह विवक्षित होगा कि उसे दाम्पत्य जीवन असहनीय लगता है। हम नहीं समझते कि ऐसी परिस्थितियों में प्रत्यर्थी पति को कष्ट के आधार पर राहत से इन्कार करने की गुंजाइश छोड़ना न्यायसंगत या उचित होगा। जहां पत्नी अर्जीदार हो और पति प्रत्यर्थी हो वहां ऐसी कोई परिस्थिति पैदा नहीं हो सकती जिसमें विवाह विच्छेद की मंजूरी से (प्रत्यर्थी) पति को हो सकने वाला कष्ट विवाह विच्छेद के मंजूर न किए जाने पर (अर्जीदार) पत्नी को होने वाले कष्ट से अधिक गम्भीर हो। ऐसी स्थिति कल्पनातीत न हो किन्तु बारंबार नहीं होगी।

7.11. यह उल्लेखनीय है कि अंग्रेजी अधिनियम के विपरीत, जिसमें कि न्यायालय को गम्भीर वित्तीय और अन्य कष्ट दोनों दशाओं में विवाह विच्छेद की डिक्री देने से इन्कार करने का विवेकाधिकार दिया गया है, हमने अपने प्रस्थापित संशोधन में राहत देने के इन्कार करने का विवेकाधिकार केवल गम्भीर वित्तीय कष्ट की ऐसी दशाओं तक सीमित रखा है जिसमें न्यायालय यह समझता है कि सभी परिस्थितियों में विवाह को विघटित करना गलत होगा। हमने "अन्य कष्ट" के मामले नहीं रखे हैं क्योंकि हमारी राय में "अन्य कष्ट" शब्दों से सभी प्रकार के अभियोजन के लिए मार्ग खुल जाएगा जो धारा 13-ब में समाविष्ट प्रस्थापित उपबन्ध को, पति द्वारा अर्जी की दशा में, बहुत से मामलों में न्यूनाधिक रूप में भ्रामात्मक बना देगा।

7.12. **पत्नी को कष्ट के आधार से संबंधित प्रश्न के बारे में सौकर्म**—अतः हमारी यह सिफारिश है कि जब विवाह को अपरिहार्य विच्छिन्नता के आधार पर विवाह विच्छेद की अर्जी की प्रत्यर्थी पत्नी हो तब न्यायालय को उस दशा में विवाह विच्छेद का इन्कार करने का विवेकाधिकार होना चाहिए जब उसका समाधान हो जाता है कि विवाह विच्छेद की मंजूरी देने से प्रत्यर्थी को गम्भीर वित्तीय कष्ट हो सकता है और ऐसी परिस्थितियों में विवाह का विघटन करना गलत होगा।

---

[1] 1975 के अधिनियम, धारा 5, पीछे पैरा 7.7 देखिए।

7.13. **इंग्लैण्ड के अधिनियम की "कष्ट" की परिभाषा अन्तःस्थापित नहीं की गई**—इंग्लैण्ड के अधिनियम से एक और भिन्न बात जो हम कर रहे हैं उसे स्पष्ट करना भी वांछनीय है। अंग्रेजी अधिनियम की धारा 5(3) यह उपबन्ध करती है कि इस धारा के प्रयोजनों के लिए "कष्ट" के अन्तर्गत कोई ऐसा फायदा प्राप्त करने के अवसर की हानि भी है जिसे प्रत्यर्थी विवाह के विघटित न किए जाने पर प्राप्त करना। हमारा यह विचार है कि ऐसे उपबन्ध को अधिनियम में समाविष्ट नहीं करना चाहिए। ऐसा प्रतीत होता है कि इसके अन्तर्गत केवल संयोग, सम्भावनाएं और प्रत्याशी आती हैं और इसे विस्तृत करके इसके अन्तर्गत इस प्रत्याशा को हानि को भी लाया जा सकता है कि पत्नी पति के बाद भी जीवित रह सकती है और तब निर्वसीयती उत्तराधिकार के तौर पर उसकी सम्पदा विरासत में जा सकती है। इसलिए हम अंग्रेजी अधिनियम में यथा अन्तर्विष्ट "कष्ट" की परिभाषा को अन्तःस्थापित करने की प्रस्थापना नहीं करते हैं।

अध्याय 8

संशोधन जिनकी सिफारिश की गई हैं।

8.1. नई धाराओं 13ग, 13घ और 13ङ का अन्तः स्थापन—अब तक इस रिपोर्ट में मूल प्रकार[1] के लिए अनेक मामलों पर विचार किया गया है उनके बारे में हमारी सिफारिशों[2] को कार्यान्वित करने के उद्देश्य से हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 में अन्तःस्थापित की जाने वाली नई धाराओं का कच्चा प्रारूप नीचे दिया गया है[3]—

"13ग विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के आधार पर विवाह विच्छेद—(1) अंग्रेजी अधिनियम, 1973 की धारा 1(1) से तुलना कीजिए—विवाह विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन के लिए न्यायालय में अर्जी, इस आधार पर कि विवाह अपरिहार्य रूप से विच्छिन्न हो गया है, विवाह के दोनों में से किसी पक्षकार द्वारा उपस्थापित की जा सकती है।

(2) अंग्रेजी अधिनियम की धारा 1(2)(ङ) से तुलना कीजिए—ऐसी अर्जी की सुनवाई करने वाला न्यायालय विवाह का अपरिहार्य रूप से विच्छिन्न हो जाना तब तक अभिधारित नहीं करेगा जब तक उसका समाधान नहीं हो जाता कि अर्जी उपस्थापित किए जाने के कम से कम ठीक तीन वर्ष पहले की लगातार अवधि तक विवाह के पक्षकार अलग अलग रहे हैं।

(3) अंग्रेजी अधिनियम 1973 की धारा 1(4) से तुलना कीजिए—यदि उपधारा (2) में उल्लिखित तथ्य के बारे में साक्ष्य पर न्यायालय का समाधान हो जाता है तो जब तक सम्पूर्ण साक्ष्य पर उसका यह समाधान नहीं हो जाता कि विवाह अपरिहार्य रूप से विच्छिन्न नहीं हुआ है वह इस अधिनियम के अधीन रहते हुए विवाह विच्छेद की डिक्री प्रदान करेगा।

(4) अंग्रेजी अधिनियम 1973 की धारा 2(5) से तुलना कीजिए—उपधारा (2) के प्रयोजन के लिए यह विचार करने में कि क्या वह अवधि जिसमें विवाह के दोनों पक्षकार अलग अलग रहे हैं लगातार अवधि थी किसी एक ऐसी अवधि के (जो कुल मिलाकर तीन मास से अधिक की नहीं होगी) जिसके दौरान पक्षकार फिर से साथ साथ रहे हैं हिसाब में नहीं लिया जाएगा किन्तु कोई भी अवधि जिसके दौरान पक्षकार साथ साथ रहे हैं उस अवधि के भाग के रूप में हिसाब में नहीं ली जाएगी जिसमें कि विवाह के पक्षकार अलग अलग रहे।

---

[1] प्रक्रियात्मक और पारिणामिक संशोधनों के लिए आगे पैरा 8. और 8.3 देखिए जो धारा 21क और 23(1) से संबंधित।।

[2] पैरा 4.5	विच्छिन्नता का विवाह विच्छेद का आधार होना।
पैरा 6.4	अलग अलग रहने का विवाह विच्छेद का सबूत होना।
पैरा 6.8	अलग रहने की अवधि
पैरा 6.9	अवधि का लगातार होना।
पैरा 7.6	बच्चों से सम्बन्धित उपबन्ध
पैरा 7.10 से 7.12	कष्ट का प्रश्न

(5) **अंग्रेजी अधिनियम** 1973 **की धारा** 2(6) **से तुलना कीजिए**—उपधारा (2) और (4) के प्रयोजनों के लिए किसी भी पति और पत्नी को अलग अलग रहता हुआ माना जाएगा जब तक कि वे एक ही गृहस्थी में साथ साथ न रह रहे हों और इस धारा में साथ साथ रहने वाले विवाह के पक्षकारों के प्रति निर्देशों का यह अर्थ किया जाएगा मानों वह उन के एक ही गृहस्थी में साथ साथ रहने के प्रति निर्देश हों ।

13घ **कष्ट के आधार पर अर्जी का विरोध करने का पत्नी का अधिकार**—(1) **अंग्रेजी अधिनियम** 1973 **की धारा** 5 **से तुलना कीजिए** । जहां 13ग के अधीन विवाह विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन अर्जी करे प्रत्यर्थी पत्नी है वहां वह डिक्री दिए जाने का इस आधार पर विरोध कर सकेगी कि विवाह के विघटन से उसको गम्भीर वित्तीय कठिनाई होगी और सभी परिस्थितियों में विवाह को विघटित करना गलत होगा ।

(2) जहां डिक्री दिए जाने का विरोध इस धारा के बल पर किया जाता है वहां—

(क) यदि न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि अर्जीदार धारा 13ग में दिए गए आधार का अवलम्ब लेने का हकदार है, और

(ख) यदि इस धारा से अलग न्यायालय अर्जी पर डिक्री मंजूर कर देता, तो न्यायालय विवाह के पक्षकारों के आचरण और उन पक्षकारों के तथा किन्हीं बच्चों अन्य सम्बद्ध व्यक्तियों के हितों सहित सब परिस्थितियों का ध्यान रखेगा और यदि न्यायालय की यह राय है कि विवाह के विघटन से प्रत्यर्थी को गम्भीर वित्तीय कष्ट होगा और सभी परिस्थितियों में विवाह को विघटित करना गलत होगा तो वह अर्जी को खारिज कर देगा या समुचित मामले में कार्यवाहियों को तब तक रोक रखेगा जब तक कष्ट को दूर करने के लिए उसको समाधानप्रद रूप में इन्तजाम नहीं कर दिए जाते ।

13ङ (1) को प्रभावित करने वाली विवाह विच्छेद की डिक्री पर — न्यायालय धारा 13ग के अधीन विवाह विच्छेद की डिक्री केवल तभी पारित करेगा जब उसका समाधान हो जाता है कि उस विवाह से हुए उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट बच्चों के भरण पोषण के लिए विवाह के पक्षकारों की वित्तीय हैसियत से संगत पर्याप्त उपबन्ध कर दिए गए हैं ।

(2) यह धारा निम्नलिखित को लागू होगी—

(क) अवयस्क बच्चे,

(ख) अविवाहित या विधवा पुत्रियां जिनके पास अपना भरण पोषण करने के लिए वित्तीय साधन न हों, और

(ग) ऐसे बच्चे जिनके शारीरिक या मानसिक स्वास्थ्य की विशेष परिस्थिति के कारण उनकी देखभाल करना आवश्यक है और जिनके पास अपना भरण पोषण करने के लिए वित्तीय साधन हों ।

8.2. **धारा 21क का संशोधन**—एक नई धारा अन्तःस्थापित करने की प्रस्थापना की दृष्टि से धारा 21क(1) खण्ड (क) और (ख) में पारिणामिक परिवर्तन करने भी आवश्यक होंगे ।

कुछ मामलों में अर्जियों को अन्तरित करने की शक्ति

धारा 21क, उपधारा (1) और उपधारा (2) इस प्रकार हैं :—

21क (1) जहां—

(क) इस अधिनियम के अधीन कोई अर्जी अधिकारिता रखने वाले जिला न्यायालय में विवाह के किसी पक्षकार द्वारा धारा 10 के अधीन न्यायिक पृथक्करण की डिक्री के लिए या धारा 13 के अधीन विवाह विच्छेद की डिक्री के लिए प्रार्थना करते हुए उपस्थापित की गई है, और

(ख) उसके पश्चात् इस अधिनियम के अधीन कोई दूसरी अर्जी विवाह के दूसरे पक्षकार द्वारा किसी आधार पर धारा 10 के अधीन न्यायिक पृथक्करण की डिक्री के लिए या धारा 13 के अधीन विवाह विच्छेद की डिक्री के लिए प्रार्थना करते हुए, चाहे उसी जिला न्यायालय में अथवा उसी राज्य के या किसी भिन्न राज्य के किसी भिन्न जिला न्यायालय में उपस्थापित की गई है ।

वहां ऐसी अर्जियों के संबंध में उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट रीति से कार्यवाही की जाएगी ।

(2) ऐसे मामले में जिसे उपधारा (1) लागू होती है—

(क) यदि ऐसी अर्जियां एक ही जिला न्यायालय में उपस्थापित की जाती हैं तो दोनों अर्जियों का विचारण और उनकी सुनवाई उस जिला न्यायालय द्वारा एक साथ की जाएगी ;

(ख) यदि ऐसी अर्जियां भिन्न भिन्न जिला न्यायालयों में उपस्थापित की जाती हैं तो बाद वाली उपस्थापित अर्जी उस जिला न्यायालय को अन्तरित की जाएगी जिसमें पहले वाली अर्जी उपस्थापित की गई थी और दोनों अर्जियों की सुनवाई और उनका निपटारा उस जिला न्यायालय द्वारा एक साथ किया जाएगा जिसमें पहले वाली अर्जी उपस्थापित की गई थी ।

उपधारा (1) खण्ड (क) और खण्ड (ख) में नई जोड़ी गई उपधारा 13ग का उल्लेख होना चाहिए । खण्ड (क) में "धारा 13" शब्द, और अंक के पश्चात् "या धारा 13ग" शब्द अंक और अक्षर अन्तःस्थापित किए जाने चाहिए । खण्ड (ख) में "धारा 13" शब्द और अंक के पश्चात् "या धारा 13ग" शब्द, अंक और अक्षर अन्तःस्थापित किए जाने चाहिए ।

8.3. धारा 23(1)(क) का **संशोधन**—हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 23(1)(क) की ओर भी ध्यान देना चाहिए जो कार्यवाहियों में डिक्री के बारे में है । धारा 23(1)(क), जहां तक वह संगत है, इस प्रकार है :—

"23(1) यदि इस अधिनियम के अधीन होने वाली किसी कार्यवाही में चाहे उसमें प्रतिरक्षा की गई हो या नहीं न्यायालय का समाधान हो जाए कि—

(क) अनुतोष अनुदत्त करने के आधारों में से कोई न कोई आधार विद्यमान है और अर्जीदार (उन मामलों को छोड़कर जिन में उसके द्वारा धारा 5 के खण्ड के उपखण्ड (क), उपखण्ड (ख) या उपखण्ड (ग) में विनिर्दिष्ट आधार पर अनुतोष चाहा गया है) अनुतोष के प्रयोजन से अपने ही दोष या

नियोग्यता का किसी प्रकार फायदा नहीं उठा रहा है या उठा रही है, और—

तो ऐसी ही दशा में, किन्तु अन्यथा नहीं, न्यायालय तदनुसार ऐसा अनुतोष डिक्री कर देगा।"

हमारी राय में यह वांछनीय है कि नई धारा 13ग के अधीन अर्जी धारा 23(1) (क) की परिधि से अपवर्जित होनी चाहिए। जहां एक बार यह विनिश्चय कर लिया जाता है कि विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के आधार पर विवाह विच्छेद मंजूर कर लिया जाए वहां कोई ऐसा अभिकथन विसंगत माना जाना चाहिए कि विच्छिन्नता लाने वाली परिस्थितियों का कारण किसी पक्षकार का कसूर भी था। ऐसे मामलों में धारा 23(1)(क) पूर्ण रूप से कठोर प्रवर्तन होने देने से उस संशोधन का उद्देश्य विफल हो सकता है जिसकी सिफारिश की गई है। अतएव धारा 23 (1)(क(में अन्तर्विष्ट सामान्य और निरपेक्ष प्रतिरोध अपरिहार्य विच्छिन्नता के मामले में असमुचित होगा।

तदनुसार हम सिफारिश करते हैं कि धारा 23(1)(क) में "चाहा गया है" शब्दों के पश्चात् "और उन मामलों को छोड़कर जिनमें अर्जी धारा 13(ग) के अधीन उपस्थापित की गई है" शब्द, अंक और अक्षर अन्तःस्थापित किए जाने चाहिए। जोड़ी सामग्री निश्चय ही धारा 23(1(क) में बन्द होने वाले आयताकार कोष्ठक से पहले होगी।

एच. आर. खन्ना
अध्यक्ष

पी. एम. बख्शी
सदस्य-सचिव

नई दिल्ली
7 अप्रैल, 1978

परिशिष्ट

भारत का विधि आयोग

हिन्दू विवाह अधिनियम

पर

प्रश्न सूची : विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के आधार पर विवाह-विच्छेद

अनेक देशों की विधियों में अब विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता को विवाह-विच्छेद की डिक्री देकर विवाह को विघटित करने का एक अच्छा आधार माना जाता है। रामकली बनाम गोपालदास[1] के मामले में दिल्ली उच्च-न्यायालय की एक पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय ने ऐसे संयोजन को जो पूर्णतः विच्छिन्न हो गया हो, ज़ारी रखने पर जोर न देने की आधुनिक प्रवृत्ति का ध्यान रखा और कहा :

> "यह व्यावहारिक और वास्तविक दृष्टिकोण नहीं होगा, वस्तुतः यह अयुक्तियुक्त और अमानवीय होगा कि पक्षकारों को विवाह का दिखावा बनाए रखने के लिए बाध्य किया जाए यद्यपि उनके बीच पूर्ण रूप से झगड़ा हो चुका हो और उनके पति और पत्नी के रूप में कभी फिर से साथ साथ रहने की कोई सम्भावना न हो।"

बूलण्ट बनाम ब्लण्ट[2] वाले मामले में वाइकाउन्ट साइमन एल सी ने उन बातों को, जो विवाह विषयक मामलों में अभिभावी होनी चाहिए, विनिर्दिष्ट करते हुए कहा :

> "इन चार बातों के साथ में एक अधिक व्यापक प्रकार की पांचवी बात जोड़ना चाहूंगा जिसे वास्तव में मूल महत्त्व की बात समझना चाहिए, अर्थात्—
>
> व्यापक रूप से समाज के हित का निर्णय विवाह की आबद्धकर पवित्रता के प्रति सम्मान और उन सामाजिक बातों के बीच सही संतुलन कायम रखकर करना चाहिए जिनसे ऐसे संयोजन को बनाए रखने पर जोर देना सार्वजनिक नीति के प्रतिकूल हो जाता है जो कि बिल्कुल ही विच्छिन्न हो गया हो। यह ध्यान देने योग्य है कि हाल के वर्षों में यह अंतिम बात इस प्रकार प्रवर्तित हुई है कि उससे न्यायालय ऐसे अनेक मामलों में अनुकूल विवेक का प्रयोग करने में उत्प्रेरित हुए हैं जिनमें पहले के जमाने में डिक्री देने से निश्चय ही इन्कार कर दिया जाता।"

ब्रिटेन की पार्लियामेंट ने तब से मैट्रिमोनियल काजेज एक्ट, 1973 अधिनियमित किया है (जो डाईवोर्स रिफार्मस एक्ट, 1969 का स्थान लेता है)। उस अधिनियम की धारा 1 के अनुसार विवाह-विच्छेद के लिए अर्जी इस आधार पर दी जा सकती है कि विवाह अपरिहार्य रूप से विच्छिन्न हो गया है। उपर्युक्त अधिनियम की धारा 1, 2 और 3 की इस प्रश्न सूची[3] के उपबंध में दिया गया है।

---

[1] रामकली बनाम गोपालदास (1971) आई एल आर। दिल्ली–10 (एफ बी)

[2] 2 ब्लण्ट बनाम बल्ण्ट (1943) 2 ए एल एलई आर 76, 78 एच–एल–7

[3] प्रश्न सूची के उपाबन्ध इसके साथ नहीं दिए गए हैं।

एक प्रख्यात विधिवेत्ता ने सुझाव दिया है कि हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 में आवश्यक संशोधन करके विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता को भी विवाह विच्छेद का एक आधार बनाया जाए। विवाह विच्छेद के संबंध में हिन्दू विवाह अधिनियम के सुसंगत उपबंध धारा 13, 13क और 13ख में है उनको भी इसी[1] प्रश्न सूची के उपबंध में दिया गया है। यह उल्लेखनीय है कि धारा 13ख पारस्परिक सम्मति से विवाह विच्छेद की डिक्री के लिए उपबन्ध करती है।

विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के आधार पर विवाह-विच्छेद की अर्जियों वाले अधिकतर मामलों में न्यायालय के लिए विवाह विच्छेद की डिक्री देने से पूर्व इस प्रश्न पर जाना आवश्यक नहीं होगा कि किस पक्षकार का कसूर था और यह सिद्ध करना पर्याप्त होगा कि पति और पत्नी के सम्बन्ध इस सीमा तक छिन्न भिन्न हो गए हैं कि पुनर्मिलाप की कोई सम्भावना नहीं है। इससे विवाह के दौरान ऐसे आपसी मनमुटाव और ऐसी अन्य घटनाओं का साक्ष्य देना आवश्यक नहीं होगा जिन्हें पक्षकार प्रकट करना चाहें।

विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता को विवाह विच्छेद का एक आधार बनाए जाने के सुझाव पर कोई और कार्रवाई करने से पूर्व यह उचित समझा गया है कि एक संक्षिप्त प्रश्नसूची जारी करके इस मामले पर विचार आमंत्रित किए जाएं। निवेदन है कि यदि आपत्ति न हो तो इस प्रश्न सूची के मिलने की तारीख से छह सप्ताह के अन्दर इस पर विचार करके अधोहस्ताक्षरी को उत्तर भेज दिया जाए।

प्रश्न 1—क्या आप इस सुझाव से सहमत हैं कि विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता को विवाह विच्छेद की डिक्री देने का एक अच्छा आधार बनाने के लिए हिन्दू विवाह अधिनियम में संशोधन किया जाए ?

प्रश्न 2—यदि प्रश्न 1 का उत्तर सकारात्मक है तो आपकी राय में ऐसी कौन सी परिस्थितियां हैं जिनको विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता साबित करने के लिए पर्याप्त समझना चाहिए ?

प्रश्न 3—पक्षकारों को कितने समय तक अलग रहा होना चाहिए। जिससे न्यायालय यह निष्कर्ष निकाल सके कि विवाह अपरिहार्य रूप से विच्छिन हो गया है ?

प्रश्न 4—क्या बच्चों के होने से विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के आधार पर विवाह विच्छेद की डिक्री देना वर्जित होना चाहिए ? यदि हां, तो क्या यह वर्जन पूर्ण होना चाहिए या आंशिक ?

प्रश्न 5—क्या आप की राय में कोई ऐसी विशेष परिस्थितियां भी हैं जिनमें विवाह की अपरिहार्य विच्छिन्नता के सिद्ध हो जाने पर भी विवाह विच्छेद की डिक्री मंजूर नहीं की जानी चाहिए ? यदि हां तो कृपया उन परिस्थितियों को विनिर्दिष्ट कीजिए।

---

[1] प्रश्न सूची के उपबन्ध इसके साथ नहीं दिए गए हैं।

M/P(D)62MofLJ&CA— , —20-12-79—GIPS

PRINTED BY THE MANAGER GOVERNMENT OF INDIA PRESS SIMLA
FOR THE CONTROLLER OF PUBLICATIONS CIVIL LINES DELHI
1979